वर्ष 3 अंक 3–4

ཀུན་འཛོམས།

कुन्ज़ोम

जनवरी–दिसम्बर 2007 और 2008

Society for Conservation and Promotion of Culture in Lahul & Spiti (Kunzom)
Registered under Societies Registration Act No. Kyelang 210/SCPC. Dt.7-12-2000

Published by : Society for Conservation and Promotion of Cultural in Lahoul & Spiti (Kunzom)

Society for Conservation and Promotion of Culture in Lahul & Spiti (Kunzom)
Registered under Societies Registration Act No. Kyelang 210/SCPC. Dt.7-12-2000

संस्था के कुछ सीमित उददेश्य हैं :–

लाहुल व स्पिति तथा हिमाचल के विभिन्न क्षेत्रों की भाषा व संस्कृति से सम्बन्धित काम करना, इनके विषय में सामग्री एकत्रित करना तथा इस क्षेत्र में काम करने वाले विद्वानों तथा संस्थाओं और सरकारी विभागों व संस्थाओं से आदान–प्रदान करना।

संस्थापक सदस्य :–

1 तोबदन, कुल्लू
2 कर्नल (रिटार्यड) प्रेम चंद, के•सी•, एस• एम•, वी•एस• एम• कुल्लू
3 टशी संडुब, मंडी
4 नवांग नोरबू कुकुजी, केलंग
5 डा. बनारसी लाल, बनारस
6 डा. रंधीर मानेपा, केलंग
7 सोनम होज़ेर, क्वारिंग
8 अमर सिंह, शिमला
9 उरज्ञान छेरिंग, कुल्लू
10 छेरिंग दोरजे, दिल्ली

संपर्क :–

तोबदन
पो.बो. 24, मियां बेहड़
ढालपुर, कुल्लू–175101,

सहयोग :– रू. 50/–

रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। इनमें संपादकीय सहमति आवश्यक नहीं।

– मुख्य संपादक

सम्पादकीय

"कुन्ज़ोम" की दीर्घ प्रतीक्षा अन्ततः समाप्त हुई। "कुन्ज़ोम" के वर्तमान निर्गम का काफी प्रयास मलाणा तथा मलाणा के देव, बड़ा देउ, जमलू पर रहा है। जमलू अदृश्य हैं। परन्तु उनके कृत्य प्रशंसनीय रहे हैं। उन्होंने एक संस्कृति को जन्म दिया। उसका भरण–पोषण कर उसे यौवन प्रदान किया है। एक निश्चित क्षेत्र का देऊ–शासक होने के बावजूद उनके तेजस्वित्व का प्रभाव दूर–दूर तक प्रसारित हुआ। मलाणा के अतिरिक्त कुल्लू में अन्य क्षेत्र, लाहुल व स्पिति की संस्कृतियो को प्रभावित कर उनमें नया रंग भरा । अपने प्रभुत्व के कारण जमलू और उनका राज्य मलाणा का नाम विश्व भर में ख्यात है। फिर भी उनसे सम्बन्धित इतिहास के कई पहलू अभी तक अनसुलझे पहेली हैं। यह भी सम्भवतः उनकी महानता का एक चिन्ह है और हमारे समझने की क्षमता की सीमा का द्योतक भी।

मलाणा विद्वानों का विशेष अध्ययन स्थल रहा है। यहां की संस्कृति, अद्वितीय प्रशासनिक व्यवस्था तथा भोगौलिक स्थिति, जो यहां की संस्कृति को विशुदद बनाए रखने में सदैव सहायक रही है, विद्वानों के प्रिय विषय रहे हैं। अतः जमलू और मलाणा पर बहुत साहित्य रचा गया है।

मलाणा और जमलू ने अपने अतीत के दीर्घ काल में अलग व्यक्तित्व का निर्माणा किया और विश्व के इतिहास में अपना एक विशिष्ट स्थान बनाया है। ये दोनो स्वतन्त्रता के प्रतीक हैं। आज हम साक्षी हैं – मलाणा अपने इतिहास के संकमण और परिवर्तन के एक तीव्रतम वक को लांघते हुए। इस प्रकिया को गति देने में सहायक रही हैं समय, विश्व की तीव्र परिवर्तनीय अवस्था व मलाणा में हाल ही में घटी कुछ अवांछनीय घटनाएं, ऐसा हम मान सकते हैं। मलाणा अब नई दुनियां में कदम रख चुका है और अपने एक नये इतिहास को रूप दे रहा है। "कुन्ज़ोम"का प्रस्तुत अंक मलाणा और जमलू के अतीत के कुछ क्षणों के बारे में थोड़ी जानकारी एकत्रित करने का प्रयास है – भंडार में अंशदान।

यहां विद्वानों ने अपनी रचनाओं में इस रहस्य के विभिन्न पहलुओं को खोल कर स्पष्ट करने का प्रयास किया है। उन्होने लगभग हर आवश्यक विषय पर अपना मत प्रकट किया है, यथाः जमलू का इतिहास, कुल्लू के विभिन्न स्थानों के साथ उनका सम्बन्ध तथा लाहुल व स्पिति में जमलू से सम्बधित परंपराएं। इनके अतिरिक्त मलाणा में मनाए जाने वाले कुछ उत्सवों व सामाजिक संस्कारों का परिचय। इस प्रकार वर्तमान अंक को समग्र स्वरूप देने का एक प्रयास रहा है। परन्तु यह विषय अनन्त है। हमारा प्रयास अप्रयाप्त है।

इसके अतिरिक्त हमारे मुख्य विषय पर तथा कुछ विविध व अनअपेक्षित परन्तु महत्वपूर्ण विषयों पर इस अंक में चर्चा है।

कुन्जोम के दो अंकों के अन्तराल काल में हमारे एक विशिष्ट सहयोगी के0 अंगरूप लाहुली के नही रहने से लाहुल के, विशेष रूप से लेखक जगत में, एक अपूर्णीय शून्य उत्पन्न हुआ है। नावांग नोरबू ने 'लाहुली' के जीवन क्रम से कुछ विशेष क्षणों और कृत्यों को सपरिश्रम चुनकर जो पुष्पमाला गूंथा है हम श्रद्धांजली स्वरूप भेंट कर हैं। कुन्ज़ोम के प्रयासों को सफल बनाने में सभी सहयोगियों, लेखकों, विद्वानों सहायकों व पाठकों सब का कुन्जोम परिवार की ओर से सादर धन्यवाद है।

मुख्य सम्पादक

के0 अंगरूप लाहुली – जीवनी

–नवांग नोरबू

के0 अंगरूप लाहुली का जन्म 10 जुलाई, 1923 को जिला लाहुल–स्पिति के मुख्यालय केलंग में हुआ था। उनके पिता का नाम कुलु व माता का पलजिन डोलमा था। उनके घर का नाम तत्कालीन पडरोडपा तथा वर्तमान में मोरूपशी है। उनके पिता जी गृहस्थी लामा थे। वे अपने लाडले पुत्र को एक अच्छा लामा बनाना चाहते थे। अंगरूप बचपन से बुद्धिमान व दयालु स्वभाव के थे। उनकी प्रारंभिक शिक्षा घर में अपने पिता से ही हुई। क्योंकि उनके पिता शशुर गोंपा में ञेरपा–भण्डारी का कार्य करते थे, इस लिए वे दोनो गोंपा में रहते थे।

उन दिनों लाहौल में कोई अच्छा शिक्षण संस्थान नहीं था, जहां से अच्छी शिक्षा ग्रहण की जा सके। बाद में लोगों ने केलंग में एक शिक्षा समिति बनाई, जो संभवतः 1935–40 के बीच में बनी थी। इस समिति ने केलंग में एक स्कूल खुलवाने का निर्णय लिया। उनके प्रयास से District Board Middle School खोला गया जिसमें उर्दू व भोटी भाषा पढ़ाई जाती थी।

इस पाठशाला में अंगरूप सहित कई छात्रों ने प्रवेश लिया । अंगरूप भोटी पढ़ना चाहते थे। इस पाठशाला में लामा दोम्बा भोटी के अध्यापक थे। बाद में यह स्कूल अधिक देर नहीं चल सका और बंद करा दिया गया। लामा दोम्बा शशुर गोंपा में रहते थे। अंगरूप व उनके सहपाठी पुनः लामा दोम्बा से शिक्षा ग्रहण करने हेतु शशुर में रहने लगे। यहां पर उन्होंने लामा दोम्बा से भोटी भाषा व पूजा की विधि–विधान आदि सीखी। साथ ही लामा छेरिंग तन्डूप से भोट व्याकरण, रिनपोछे ज़मा–तोग आदि की भी शिक्षा ग्रहण की। इसके अतिरिक्त चिस–ज्योतिषि के विद्वान बीलिंग के लामा छेवांग से ज्योतिषि भी सीखी।

अंगरूप भोटी के अतिरिक्त अन्य भाषा भी सीखना चाहते थे। परंतु लाहुल में ऐसा साधन न होने के कारण वे लाचार थे। बाद में लाहुल के कुछ बुद्धिजीवी जैसै ठाकुर मंगल चंद, ठाकुर शिव चन्द व डा0 भगवान सिंह आदि ने अंगरूप व लामा कुंगा को भोटी के अतिरिक्त अन्य भाषा हिन्दी व संस्कृत आदि सीखने हेतु महाबोधी सभा सारनाथ जाने के लिए प्रेरित किया। क्योंकि उन बुद्धिजीवियों को दुख था कि लाहुल में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जो भोटी के साथ साथ हिन्दी व संस्कृत जानता हो। इनकी प्रेरणा से अंगरूप व लामा कुंगा दोनों बर्ष 1948 में सारनाथ–बनारस गए। लामा कुंगा अधिक गर्मी के कारण बीमार पड़ गए और वापिस आना पड़ा। अंगरूप कष्ट सहते हुए भी 8 वर्ष तक हिन्दी, संस्कृत व भोटी भाषा का अध्ययन करते रहे। महा बोधी सभा सारनाथ में कई विद्वान थे। उनमें भिक्षु धर्मरक्षित उनके मुख्य गुरू थे। उनके कथन अनुसार हिन्दी व संस्कृत का ज्ञान उन्हें भिक्षु धर्मरक्षित की ही देन है।

इस बीच लद्दाख के प्रमुख लामा कुशोक बकुला जो इन दिनों जम्मू काश्मीर सरकार में मंत्री थे सारनाथ आये। उन्होंने महाबोधी सभा सारनाथ से अनुरोध किया कि उन्हें एक हिन्दी पढ़ाने वाले की आवश्यकता है। यदि उनके पास कोई ऐसा व्यक्ति हो जो भोटी व हिन्दी दोनों जानता हो तो बेहतर होगा। कुशोग बकुला को हिन्दी भाषा की दिक्कत पड़ती थी। महा बोधी सभा ने अंगरूप का नाम प्रस्तावित किया और वे बकुला को हिन्दी पढ़ाने के लिए श्रीनगर चले गए। वहां पर वे दो वर्ष तक बकुला को हिन्दी पढ़ाते रहे। उनका फिर भी यहां पर मन नहीं लग रहा था क्योंकि वे अभी भी भोट साहित्य में आगे अध्ययन करना चाहते थे। उन्होंने एक दिन कुशोक बकुला से अनुरोध किया कि मैं भोट साहित्य में कुछ आगे अध्ययन करना चाहता हूं। यदि आप तिब्बत जाने के लिए मार्गदर्शन करें तो मैं तिब्बत जाना चाहता हूं। बकुला ने स्वीकार किया। संयोगवश कुशोक बकुला और तिब्बत के पनछेन लामा, दोनों प्रसिद्ध शिक्षक डुब्लछु–रिन्पोछे के पास डुस्पुङ महाविहार में, सहपाठी थे। पनछेन लामा और कुशोक बकुला दोनों ने एक साथ गेशे ल्ह–रम–पा की परीक्षा पास की थी। इस मित्रता के नाते बकुला ने शिक्षा केन्द्र को न लिख कर पत्र सीधा डुब्लछु–रिन्पोछे को लिखा । डुब्लछु–रिन्पोछे के प्रभाव से टशी ल्हुनपो के मुख्य शिक्षा केन्द्र (रॉयल स्कूल) में अंगरूप को प्रवेश मिल गया। इस शिक्षा केन्द्र में कुल दो सौ छात्र व अध्यापक रहते थे और उन्हें सभी मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध थीं। वहां पर अंगरूप ने गेशे ङ॰वंग जिमा से तिब्बती साहित्य जैसे व्याकरण, काव्य रचना व अन्य पाठ भी पढ़ा। यहां पर उन्होंने प्रसिद्ध लामाओं से भी शिक्षा ग्रहण की।

अंगरूप तिब्बत में सन 1957 से लेकर 1959 तक रहे। वर्ष 1959 में जब तिब्बत पर चीनी आकमण हुआ तो उन्हें मजबूरन वापस भारत आना पड़ा। वे वहां से आकर बनारस पहुंचे। उन दिनों नेगी लामा बनारस में थे। अंगरूप ने उनसे भेंट की। वहां पर नेगी लामा से कई ग्रंथों की शिक्षा ली जैसे थरज्ञन, चोद–जुग (बोधी–चर्यावतार) आदि। इस बीच वे संस्कृत विश्व विद्यालय में तिब्बती भाषा अध्यापक के पद पर भी नियुक्त रहे। मई 1966 में वे पंजाब विश्व विद्यालय चंडीगढ़ में तिब्बती भाषा अध्यापक के पद पर नियुक्त हुए थे। बाद में 25–26 वर्ष कार्य करने पर विभाग अध्यक्ष पद से 31 जुलाई 1992 को सेवानिवृत हुए।

उन्होंने भोट साहित्य एवं व्याकरण से संबंधित कई पुस्तकें लिखी। इनमें संभोट व्याकरण, वृहत चरित्र, नेगी लामा की जीवनी इत्यादि प्रमुख हैं । इसके अतिरिक्त उन्होंने कई प्राचीन बौद्ध ग्रन्थों का भोटी से हिन्दी में तथा हिन्दी से भोटी में अनुवाद किया। उनके द्वारा अनुवादित ग्रंथों में आचार्य दीपंकर श्रीज्ञान विरचित विमलरत्न लेख तथा बोधिपथ प्रदीप, आचार्य चोंखपा विरचित बोधी पथकम पिण्डार्थ, नेगी लामा द्वारा विरचित रत्नप्रदीप नामक बोधीचित की स्तुति तथा आर्यतारानमस्कारैकविंशति स्त्रोतम, रवीन्द्र नाथ टैगोर द्वारा विरचित गीतान्जली एवं बाजपई की इक्यावन कविताएं आदि शामिल हैं। उन्होंने 80–90 शोध पत्र व निबंध लिखे हैं जो कई पत्र पत्रिकाओं में छपे। लाहौल के पट्टन घाटी के गुरे व गार क्षेत्र के ग्रेगस भी मौखिक रूप से सुनकर लिपि वद्ध किया है।

के॰ अंगरूप, पंजाब विश्वविद्यालय से सेवा निवृति के बाद, प्रति वर्ष शशुर गोंपा में पूरी गर्मी अकेले बिताते थे। केलंग से शशुर गोंपा तक 3 किलोमीटर की सीधी चढ़ाई 83–84 वर्ष की उम्र में भी पैदल ही चला करते थे। उन्हें किसी से मदद लेने की आदत नहीं थी। वे अपना भोजन स्वयं बनाते थे।

जनवरी 27, 2006 को थोड़ा सा बीमार पड़ने के बाद अंगरूप का मनाली के मिशन अस्पताल में निधन हो गया। उनके निधन से भोट जगत के लिए अपूर्णीय क्षति हुई है।

भोटी अध्यापक, केलंग।

मार–मे मोन–लाम
पिनघाटी में प्रचलित प्राचीन दीप प्रणिधान

– छेवांग दोरजे

क–

	अनुवाद
बुलो बु–लो लामा ल बु–लो.	अर्पित है। गुरू को अर्तित है।
बुलो बु–लो सड.ज्ञस ल बु–लो	बुद्ध को ।
बुलो बु–लो छोस ल बु–लो	धर्म को ।
बुलो बु–लो गेदुन ल बु–लो.	संघ को ।
युल दी–ल नेस–पी युल–ला ल बु–लो।	इस गांव में स्थित देवता को अर्पित है।
खार दी–ल नेस–पी चे–ला ल बु–लो।	इस किला में स्थित देवता को अर्पित है।
गोन्पा का स्रुड. खा–द्रो छोस–क्योड. ल बु–लो।	गोन्पा के धर्म के रक्षक देव, देवी, धर्म पालकों को अर्पित है।
मा–खाड. दी–ल नेस–पी ल्ह लु ज़ि–दक ल बु–लो।	इस मूल घर में स्थित देव, नागदेव और भूपति को अर्पित है।
छे–दी–यी क्याप–नेस ज़ोद चिक।	इस जन्म में शरण दें।
छि–मी या–डेन ज़ोद चिक।	पर–जन्म में मुझे उपर निकालें।
ञिन–सुम क्यी जा–रा ज़ोद चिक।	तीन दिनों में देखभाल करें।
छ़ेन–सुम क्यी मेल–छे ज़ोद चिक।	तीन रातों की पहरेदार बनें।
ञिन–छ़ेन दुई डुग–तु स्रुड. क्योब	रात दिन छः पहरों में रक्षा और कृपा करें।
गोन–क्योब झब–तेन पुड.–रो ज़ोद चिक।	पीठ से सहारा दे और कंधे का बल बना रहे।
जिग–री थाम–चेद ल स्रुड. क्योप ज़ोद–चिक।	समस्त भय से रक्षा करें।
सेम्वा–ल बार–छेद मेद–पा	
रे–वा ल खा–ग्योद मेद पा	सोच में विघ्न न हो।
चि–साम दोन–तु डुप–पा	आशा में निराशा न हो, मन की सोच पूर्ण हो।
साम–दोन यित–जिन डुप –पा	मनोकामना पूर्ण हो तथा पर–जन्म में
छि–मा कार–बोई छोई ला ठेत ज्रुर चिक।	सद्धर्म से संपर्क हो।

ख–

स्पिति पिन घाटी में अप्रैल मास के अंत और मई मास के शुरू में बीजाई शुरू हो जाती है। बीजाई से पहले जन्त्री में शुभ दिन और समय देखा जाता है। जन्त्री में खाली पात्र की दिशा भी देखी जाती है। जिस दिशा में खाली पात्र (बुमतोड.) होता है उसकी तरफ पीठ करके बीज फैंका जाता है। याक की जोडी को बुरी नजर से बचाने के लिए स्थानीय देवी देवताओं से प्रतिरक्षा सूत्र लिया जाता है तथा याक के गर्दन के बाल में बांध दिया जाता है। तत्पश्चात हल लगाना शुरू होता है। हली द्वारा प्रार्थना व याक की प्रशंसा इस प्रकार किया जाता है।

प्रार्थना	अनुवाद
शिंग–दी शिंग ला ञेन्पो ख्येन–नो गुन–दी गुन–ला ञेन्पो ख्येन–नो मि छाग पी दो छाग, मिगे पी सा गेई	इस क्षेत्र के हे देव, इस भूमि के हे भू देव, नहीं टूटने वाले पत्थर टूटें, नहीं फटने वाले भूमि में दरार पड़े।
थोंग ल ञा तर, बालाड. ल जा तार जिवा लाड.दार गोतपो दिला जा–शोक दड. जिशोक याड.शोक दड. यिड. शोक शो लाब–लेब, ख्याक ख्योक, गार–गुर सुम –दड. ऐका न सुक–प ग्योग सुम दांगा रू दो–दड. ग्योग सुम केद चिक दि–ञिद ल ज़िन सोंग सेर ञे साल –शिक।	हल मछली जैसा चले, याक या बैल पक्षी की तरह हो इस बलशाली जवान बैल को पक्षी का पर लगे। ज़मीन उबड़–खाबड, टेढ़ी मेढ़ी व घुमावदार हो तो भी सिरे से शुरू करते ही अंत तक क्षण भर में समाप्ति हेतु प्रार्थना करता हूं।

ग

स्तुति	अनुवाद
हा–रा–रा–रा–रा हार, हा–रा–रा–रा–रा हर।	हा–रा–रा हार। जोश देने वाले शब्द।
आमा डि–ला क्ये–वी डिव रूप ञिपो यिन्नो या।	मादा याक से पैदा हुए याक के बेटे, डि, शाबाश।
डिऊ रूक डे.–मा ज़िग–ज़िग ञिपो यिन्नो या।	पूंछ को हवा में लहराते हुए चलने वाले याक के बेटे शाबाश।
छोंग दार–मी बु–ञिपो यिन्नो या।	तुम दोनों विशेष जाति के याक के बेटे हो
सेर–री थुम–तोल ञिपो यिन्नो या।	या तुम दोनों सोने की पोटली हो
जुड. दड. ला–सो, ओम मणि पदमे हुंग। जेन–क्यी दिग–पा डब ल मेद। रोल नाक–पोई दिग–पा रोल दु जांग। फाग–पा चेन–रे–ज़िग ख्येन–नो या।	अब कृप्या मुड़िए, ओम मणि पदमे हुंग। मुझे कोई और पाप नहीं है बिजाई का पाप खेत की मिटटी में ही घुल जाए। आर्य अवलोकितेश्वर आप से प्रार्थना है।

सगनम, सियांग

སྐྱེ་དེ་རིང་ ༢ —

རྡོ་བསྐོས་རི་མོ་དང་ཐོག་ལྷུགས་གཞི་བཅས་ཀྱི་སྐོར། — སྤེལ་ བསྒྱུར་ རབ་རྒྱས།

སྔར་སྔ་མོའི་དུས་ལ་སྤྱི་ལོ་(ང་ཡོས) ལོ་རྒྱུས་ལོ་རབས་དང་རིག་གཞུང་གི་ནུས་པ་མཚོན་པའི་རྡོ་བསྐོས་རི་མོ་བཞེངས་སྲོལ་ཡོད་པ་བཞིན་བོད་དང་ཧི་མ་ལ་ཡའི་ས་ཁུལ་མང་པོར་རྡོ་བསྐོས་རི་མོ་སྣ་མིན་སྣ་ཚོགས་མཇལ་རྒྱུ་ཡོད། ཕྱི་ཉིའི་ཉ་པོ་དགོན་པའི་འགྲམ་གྱི་ཞ་ཟེར་བའི་ས་ཆ་ན་ཤ་བ་དང་མི་དང་གཡུང་དྲུང་སོགས་རི་སྣ་ཚོགས་དང་བོད་ཡིག་དབུ་ཅན་བཅས་བསྐོས་པའི་རྡོ་ཕ་བོང་ཕྱི་བཅུ་ལྷག་ཡོད་ཅིང་། རྡོ་བསྐོས་རི་མོ་གཅིག་གི་ནང་རྟ་སྒོག་ཅེས་པའི་ཡི་གེ་ཞིག་གསལ། དེ་བཞིན་ནུ་ཐང་དང་ལ་རི་སོགས་ནའང་རྡོ་ཕ་བོང་གི་སྟེང་ལ་རི་མོ་སྣ་མིན་སྣ་ཚོགས་དང་བོད་ཡིག་དབུ་ཅན་གྱི་གཟུགས་རིས་བསྐོས་པ་མང་པོ་ཡོད། མི་རྣམས་པ་ནམས་ཆ་རྒྱུས་ཡོད་བཞིན་ས་སྟོང་རི་སྟོད་ཁུལ་ནས་ཐོག་ལྷུགས་སམ་གནམ་ལྕགས་རྫེད་པ་ཡིན། ཐོག་ལྷུགས་ཀྱི་སྟེང་ན་རི་མོ་སྣ་མིན་སྣ་ཚོགས་ཡོད། ཐོག་ལྷུགས་སམ་གནམ་ལྕགས་ཟེར་བ་འདི་ཧི་མ་ལ་ཡའི་ཡུལ་ཚང་མ་དང་། འབྲུག་ཡུལ་དང་། བོད་བཅས་ནས་ཡོངས་སུ་གྲགས་པའི་ཅ་ལག་རྩ་ཆེན་ཞིག་ཡིན། ཐོག་ལྷུགས་ནི་སྔར་སྔ་མོའི་དུས་ལ་ལོ་བརྒྱའི་(ང་ཚོའི་)ཕ་མེས་ཚོས་བཟོས་པའི་རྒྱུ་ནོར་རྩ་ཆེན་ཞིག་ཡིན་པ་ནི་ཟེར་མ་དགོས་པ་ཞིག་རེད་ལ། ཉ་པོ་དགོན་པའི་གཙུག་ལག་ཁང་གི་གྲུང་ཤར་མའི་སྟོའི་ཡ་ཐེམ་ན་རྡོ་རྗེ་ཆེན་མོ་འཁོར་གཡོག་གི་ལྡེབས་བྲིས་ཤིག་ཡོད་པ་དེའི་ནང་ཡང་རྡོ་རྗེ་ཆེན་མོ་སོགས་ནས་སྐེ་ལ་གཟི་ཡི་ཨོག་རྒྱན་ཕྲེང་ཐག་ཁ་ཤས་བཀོན་ཡོད། རྒྱན་ཆ་གཟི་ནི་སྔར་སྔ་མོའི་དུས་ནས་ལོ་བརྒྱའི་(ང་ཚོའི་)རྩ་ཆེན་གྱི་ནོར་བུ་ཞིག་ཡིན་པ་དང་། དེ་སྐེ་ལ་བཏགས་ན་གྲིབ་དང་གདོན་སོགས་ཀྱི་གནོད་པ་ལས་སྲུང་ཟེར་སྲོལ་ཡོད་པ་དང་། གསོ་བ་རིག་པའི་ནང་གི་གྲུབ་སྒྲོན་གྱི་སྨན་རིན་ཆེན་རིལ་བུ་སོགས་ཀྱི་རྩ་ཆེའི་སྨན་རྫས་ཤིག་ཀྱང་རེད། རིན་ཆེན་གཟི་མིག་དགུ་པ་ཡག་ཤོས་གཅིག་ལ་རྒྱལ་སྤྱིའི་ཁྲོམ་རའི་ནང་རིན་སྒོར་འབུམ་ཉིས་བརྒྱ་ནས་སུམ་བརྒྱའི་བར་ཐོབ་པ་ཡིན། དེ་བཞིན་བྱུར་བདེན་ཁྲག་སྦྱོར་ཟེར་བའི་སྤུ་རུ་དམར་ནག་ཡག་ཤོས་དོ་ལ་གང་ལ་ཉིན་སྒོར་འབུམ་གཅིག་ཐུག་ཐོབ་པ་ཡིན་ནོ།།

स्पिति में उपलब्ध अभिलेख

–थुबतन रबग्ये

स्पिति में पत्थरों पर खुदे अभिलेख, रेखाचित्र तथा थोग–चगस (बर्छे का मुख अथवा बज्र) और ज़्ही (ओनिक्स) रत्न प्राप्त हुए हैं। पूर्वकाल में हमारे पूर्वजों में पत्थरों पर चित्र खोदने की परम्परा रही है। ऐसे उदाहरण तिब्बत और हिमालय के अनेकों क्षेत्रों में बहुतायात में प्राप्त होते हैं जो हमारे इतिहास को जानने के अच्छे स्त्रोत हैं। स्पिति में ताबो गोन्पा के निकट 'ज्ह' नामक स्थान पर पचास से अधिक पत्थरों और चट्टानों पर खुदे हुए हिरण, आदमी, स्वस्तिक आदि के चित्र तथा भोटी में दीर्घ रूपी अक्षरों में खुदे अभिलेख प्राप्त होते हैं। पत्थरों पर खुदे इन लेखों में से एक में 'त–ज़ोग' नामक शब्द भी है। इसी प्रकार के अभिलेख नथंग और लरी आदि स्थानों से भी मिलते हैं। बुजुर्ग लोगों से ज्ञात होता है कि खाली मैदानों व पहाड़ों से थोग–चगस प्राप्त हुए हैं। इन पर कई प्रकार के चित्र खुदे हुए हैं। थोग–चगस अथवा नम–चगस हिमालय प्रदेशों में, भूटान व तिब्बत आदि देशों में प्रचलित प्रसिद्ध वस्तु है। थोग–चगस हमारे पूर्वजों द्वारा निर्मित बहुमूल्य वस्तुओं में प्रमुख है, यह कहने की आवश्यकता नहीं। ताबो गोन्पा के विहार के पूर्वी द्वार के ऊपर वाले भाग पर महा बज्र का सपरिवार रेखा चित्र बना है। ज़्ही से बनी कई मालाएं उनके गर्दन में सजी हुई है। यह रत्न प्राचीन काल से आभूषणों में प्रयुक्त होने वाला प्रमुख है। इसे गले में पहनने से यह विष और ग्रहों के दोष से रक्षा करता है। आयुर्वेद में यह रत्न विष के दोष के इलाज में प्रयुक्त होने वाली दवाई रिन्छेने–रिल्बू, रत्न–गोली, का एक आवश्यक व मूल तत्व है। नौ आंखों वाला ज़्ही नामक रत्न उत्तम माना जाता है और बाज़ार मे इसकी कीमत दो सौ से तीन सौ लाख यानी दो से तीन सौ करोड़ (सम्भवतः दो से तीन लाख – अनु॰) रूपए हैं। उसी प्रकार शुद्ध ठक–जोर (रक्त संग्रह) नामक प्रबाल, जो लाल–काला होता है, के एक सर्वोत्तम माला का मूल्य बाज़ार में लगभग एक लाख रूपए है।

अनुवाद– तोबादन

पृष्ठ 54 से ....

मेलिङ. का मंदिर
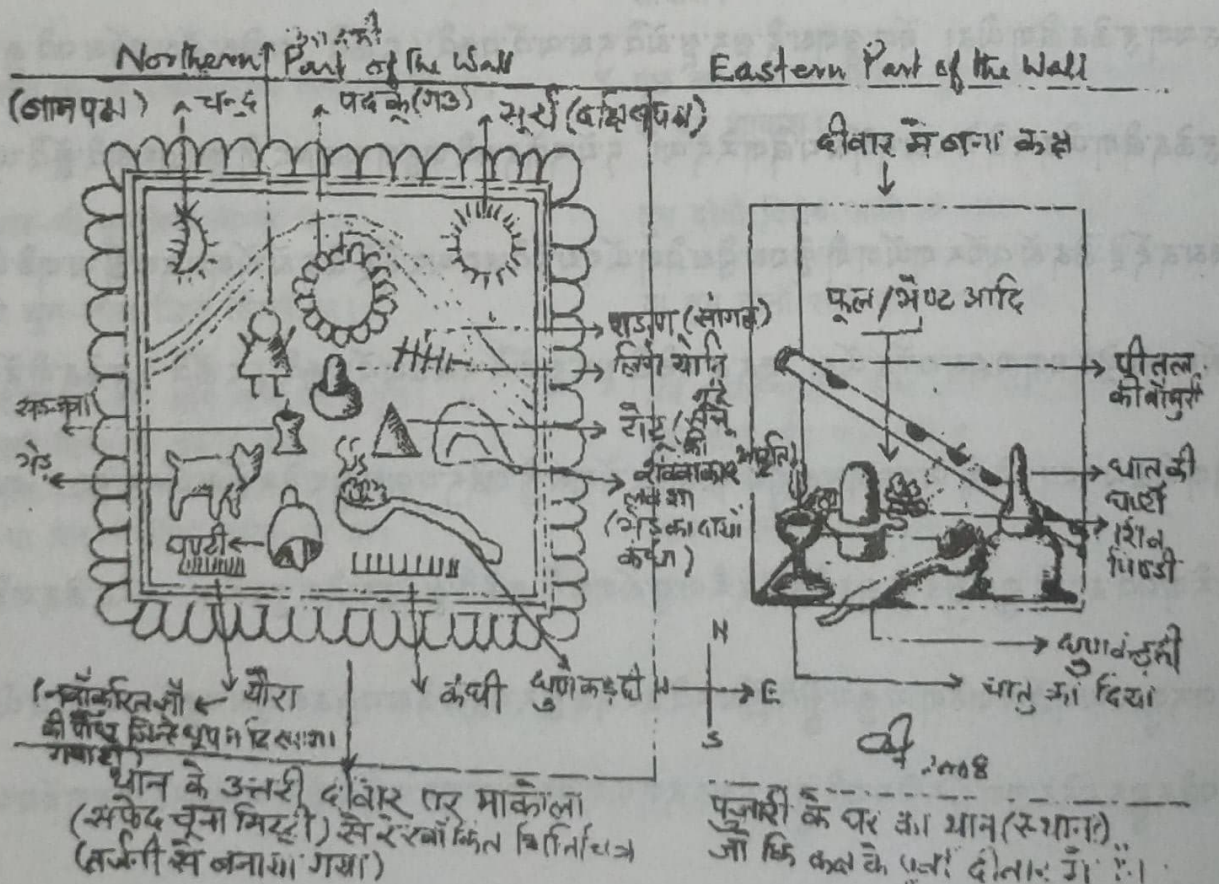
किन्नौरी और थेबरस्कद का भाषात्मक परिचय

–टशी छेरिंड. नेगी

उपरी किन्नौर के लिप्पा, असरड.. जंगी, लबरड. तथा कानम आदि गांवों में थेबरस्कद नाम की बोली बोली जाती है। यह बोली सामान्यतः किन्नौरी से भिन्न है इसलिए किन्नौरी बोली भाषी लोग इस बोली को नहीं समझ पाते हैं। कदाचित आन्तरिक रूप में देखने पर दोनों ही बोलियों में शब्द सामंजस्य है। प्रस्तुत अध्ययन में किन्नौरी को साथ रखते हुए थेबरस्कद पर अध्ययन किया गया है ताकि इस बोली की अपनी मूल विशेषताओं को भी प्रकाश में लाया जा सके और किन्नौरी के साथ इसकी भिन्नताओं और समानताओं का भी आकलन किया जा सके। इस के लिए दोनों ही बोलियों के शब्दों का व्यापक संकलन और व्याकरणात्मक पहलुओं को आधार बनाया गया है।

चरण प्रथम :–व्यंजन ध्वनियों से बने शब्द

क

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
कड़वा	क्ग	खाकतेई
भेड़	क्र	कर
तुम्हारा	क्न	किन–पौ
तुम्हें	क्नु	कनरा/गिरड.रा

ख

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
भोजन	खाऊ	थाकतु
मल	ख	ख
दर्द	आखा	आखा
पशुशाला	खुरड.	खुरड.

ग

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
चाहिए	गयामु	गीनू
मैने	गस	गस
गुड्ड	गुरड.	गुरम

घ

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
घना	घोनस	घोनस
घराट	घोठड.	घोठड.
देवता का वस्त्र	घागरो	घागरो

च

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
नाचला	चा़मु	चाऊ

लिखना	चेमिग	चेऊ
चिडिया	प्याच	प्याच
मेमना	माच	माच

छ

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
सुखाना	छरमिग	फोसमा पिनना
छोटा	छोट्स	चीगित

ज

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
खा	ज़ाव	ज़ाऊ
टाओ	ज़ेंई	ज़िना

ट

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
उखाड़ना	टन्नू	फुलमा
झुण्ड	टोलड.	टोलड.
नाक का पानी	शिटड.	शीटड.
थ्रवाह	रानेटड.	जानेटड.

ठ

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
फुलना	टन–टन	टनु
क्मरा	पनठड.	पनठड.
मोटा	मोठस	गेटो

यहां 'ठ' 'ट' में परिवर्तित हुआ है

ड

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
पर्वत	डोखड.	डोड.खड.
गुफा	डबरड.	टग
विधवा	रनडोले	रनडोले
गिद्ध	गोल्डस	गोल्डस

त

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
रखना	तामु	तमा
पानी	ती	ती
प्यास	तीसकर	तीसकर
तेल	तेलड.	मत्ती
बात	बातड.	कमचिद
छरवाजा	पितड.	पितड.

थ

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
सुन	थस	गौना
ठहरो	थरा	थोत
बाघ	थर	थोत

व

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
थ्सर	बल	पिशा
जल्दी	चोलबो	ळासल

भ

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
भाभी	भोरे	तुनमा
भान्जा	भानूच	भनज़ा

य

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
सोना	यागमिग	ज़ड.
थककर	यल–यल	मलिऊ
सास	युमे	ज्ञुमो
सूर्य	युने	नी
नृत्य	कायड.	चामा

र

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
छेना	रन्नू	खेऊ
गर्मी	रांक	राबड.
तीखा	रस	छोगस
दूध	खेरड.	खेरड.

इस प्रकार उक्त व्यंजन ध्वनियों के प्रयोग से यह स्पष्ट होता है कि इनमें बहुत भारी अंतर नहीं हैं। कुछेक शब्द बिलकुल किन्नौरी हैं लेकिन कुछेक उसके विपरीत हैं। अन्य ध्वनि शब्दों में भी यही स्थिति है। उदाहरण के लिए कुछेक शब्दों को यहां लिया जा सकता है जो दोनों ही बोलियों में एक समान है। यथा :– हि0 सुन्दर (कि0 शारे/थे0 शारे), कोध कि0 ड.र/थे0 ड.र, जीभ कि0 ले/ थे0 ले, छत कि0 मलयड./ थे0 मलयड.। किन्तु कुछेक व्यंजन ध्वनियों के शब्द एक अभिप्राय को दर्शाते हुए भी सर्वथा भिन्न हैं यथा हि0–दोपहर, कि0 लाय/ थे0ये0 अदड.निर, हि0 वर्षा, कि0 लागयच थे0 छरबा, हि0–गोबर, कि0 मोलड./ थे0 लंगसा, हि0 बहुत, कि0 वाल/ थे0 खुर्चा इत्यादि।

चरण दो:– अनुनासिक ध्वनियां

अनुनासिक ध्वनियों में दोनों ही बोलियों में अधिक सामीप्य है लेकिन ये सारे शब्द आर्य भाषा के हैं। यथा :–

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
धूप	धूपड.	धूपड.
देश	देशड.	देशड.
माघ	माहड.	माहड.
टोस	ओशड.	ओशड.
शंगल	शड.लयड.	शड.लयड.
मुख	मुखड.	मुखड.
ठ्ठल	हालड.	हालड.

लेकिन कुछेक अनुनासिक ध्वनियों वाले शब्द ऐसे हैं जो किन्नौरी में तो केवल ड. के साथ उच्चारित हुए हैं जबकि बाकी मूल रूप से हिन्दी भाषा का शब्द है लेकिन थेबरस्कद में ऐसा नहीं हो पाया है यथा :–

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
नाम	नामड.	थ्मन
कान	कानड.	रेपड.
थ्दन	दियुसड.	थ्नर
नींद	निदरड.	योन्

चरण तीन :– संज्ञा शब्द

संज्ञा शब्दों में भी कोई गहरा अंतर नहीं है, यथा :–

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
मामा	मौमा	मुंआ
टमां	आमा	टमा
साली	बोईसा	बोईसा
कपड़े	गासा	गोला
सींग	रूद्	रूचो
लड़की	छैचा	योबलड.ख
कुत्ता	कुई	खुई
शिखर	डनी	डनि
पानी	ती	ती
टादमी	मी	मी
मृत व्यक्ति	शिमी	शिमी
पुष्प	ऊ	मेनथो
घोड़ा	रड.	शड.
गाय	लड.	श्रत
घर	किम	थ्कम
घी	मार	मार
चांदी	मुल	मुल

चरण चार :– लिंग

लिंग निर्धारण को लेकर किन्नौरी और थेबरस्कद दोनों में ही एक समान विशेष बात यह है कि कुछेक पशुओं के लिए लिंग निर्धारण शब्द नहीं है। उदाहरण के लिए जैसे हिन्दी में कुत्ता–का स्त्रीलिंग कुत्ती बनता है, किन्नौरी और थेबरस्कद में ऐसा नहीं होता। इन बोलियों में एक ही शब्द पुलिंग और स्त्रीलिंग का द्योतक है।

यथा :–

पुल्लिंग / स्त्रीलिंग

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
कुत्ता–कुत्ती	कुई– कुई	कुई–कुई
घोड़ा–घोड़ी	रड्–रड्	रड्–रड्

लेकिन अन्य पशुओं के लिए लिंग निर्धारण शब्द है। यथा –

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
बैल–गाय	दामस्–लड.	दामम– रत्
भेड़– भेडी	कर–खस	कर –खस
बकरा–बकरी	आएज – बाखोर	बखरड.– ला

किन्नौरी में 'च़' लगाकर कुछेक वस्तुओं का स्त्रीलिंग बोध कराया जाता है और थेबरस्कद में 'चि़गित' लगाकर ऐसे वस्तुओं का स्त्रीलिंग बोध कराया जाता है। किन्नौरी में 'च़' शब्द 'छोटे' वस्तु को अभिव्यक्त करता है और थेबरस्कद में 'चि़गित' शब्द भी 'छोटे' का ही बोध कराता है, यथा :–

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
सन्दूक – छोटी सन्दूक	सुदूंक – जिगिच़ सुंदक	सन्दुक – चिगित सन्दूक
थाली – छोटी थाली	नड् – नड.च़	थलि – चि़गित थलि
खिड़की– छोटी खिड़की	टिनड. – टिनड.च़	टिनड. – चिगित टिनड.

इसी प्रकार किन्नौरी में हिन्दी भाषा की भांति प्रायः 'ई' लगाकर लिंग निर्धारण नहीं होता है। लेकिन थेबरस्कद में कुछ शब्द लगाकर लिंग निर्धारण कराया जाता है।

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
राम जाता है (पु0)	राम बीयो दू	राम ज़ेउ यश
सीता जाती है (स्त्री0)	सीता बीयो दू	सीता ज़ेई यश

इन वाक्यों में किन्नौरी में पु0 व स्त्री0 दोनों के लिए 'बीयो दू' शब्द ही प्रयुक्त हुआ है जब कि थेबरस्कद में सीता के लिए 'ज़ेई' लगाकर लिंग निर्धारण कराया गया है। यथा:–

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
डोलमा गीत गाती है (स्त्री0)	डोलमा गीथड. लानो दू	डोलमा ग्रेप लोऊ यश
नोरगू गीत गाता है (पु0)	नोरगू गीथड. लानो दू	नोरगू ग्रेप लोऊ यश
सोनम अच्छा लड़का है (पु0)	सोनम दम छड. दू	सोनम मरी छड. तश
डोलमा अच्छी लड़की है (स्त्री0)	डोलमा दम छैचस दू	डोलमा मरी योबलड. तश
पिता आया (पु0)	बौवा बअश	अपा तुरे
मां आई (स्त्री0)	आमा बअश	अमा तुरेश
डन्डुब गया (पु0)	डन्डुब बोआ / बोअश	डन्डुब जेरू
डोलमा गई (स्त्री0)	डोलमा बोआ/ बोअश	डोलमा ज़ेरे

चरण पांच – वचन

वचन को लेकर दोनों ही बोलियों में शब्दों के उच्चारण का अन्तर स्पष्ट दिखता है। इसके अतिरिक्त अन्य कोई विशेष अन्तर दृष्टिगोचर नहीं होता। यथा :–

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
एक गाय घास खा रही है	इ लड. ची ज़ाब दू	ई रत् ची ज़ऊ थश
दो गाय घास खा रही हैं	निश लड. ची ज़ाब दू	निश रत् ची ज़ऊ थश
गायें घास खा रही हैं	लाड.ा ची जब दू	रत् पड. ची ज़ऊ थश
एक बच्चा खेल रहा है	इ चिगज़ा योचो दू	इ चिगज़ा ग्याखु थश

अन्य रूपों में जहां किन्नौरी में 'आ' लगाकर बहुवचन कराया जाता है वहीं 'थेबरस्कद' में 'पड.' लगाकर बहुबचन कराया जाता है। यथा :–

किन्नौरी		थेबरस्कद	
एकबचन	बहुबचन	एकबचन	बहुबचन
छड. (बेटा)	छाड.ा (बेटे)	छाड.ख (बेटा)	छाड.खपड. (बेटे)
रिम (खेत)	रिमा (बहुत सारे खेत)	रिम (खेत)	रिपड. (बहुत सारे खेत)
किम (घर)	किमा (बहुत सारे घर)	किम (घर)	किमपड. (बहुत सारे घर)
डेकरस (लड़का)	डेखरा (लड़के)	फोबलड.ख (लड़का)	फोबलड.खपड. (लड़के)
दोअ (वह)	दोगा (वे लोग)	दोअ (वह)	दोपड. (वे लोग)
कअर (भेड़)	कअरा (भेड़ें)	कअर / ला (भेड़)	कअरपड. (भेड़ें)
लामा (भिक्षु)	लामागा (भिक्षुगण)	लामा (भिक्षु)	लामापड. (भिक्षुगण)

चरण छः – कारक

किन्नौरी में कर्ता कारक विभिक्ति (ने) को छोड़कर अन्य कारकों में कई विभक्तियां प्रयुक्त होती हैं। उदाहरण के लिए सबसे पहले हम कर्ता कारक विभिक्ति को लें जो हिन्दी में ने और किन्नौरी में स बन जाता है। थेबरस्कद में किन्नौरी की भांति इस कर्ता कारक का कोई एक रूप नहीं है यथा :–

किन्नौरी	थेबरस्कद
गस गीथड. थस थस (मैने गीत सुना)	गस ग्रेप गोऊ
किस खेरड. तुड. तुड. (तुमने दूध पिया)	गियड. खेरड., पैल, तुड.डू
निड.ास कामड. लन लन (हमने काम किया)	निड.पड. लेन लऊ
नुस गीथड. लाना (इसने गीत गाया)	नोस ग्रेप लाउ

इस प्रकार स्पष्ट है कि जहां किन्नौरी में कर्ता कारक की प्रथम विभिक्ति 'स' है वहीं थेबरस्कद में 'यड.' और 'पड.' जैसे शब्द इस विभिक्ति के अर्थ को अभिव्यक्त करते हैं।

कर्म कारक विभक्ति 'को' के लिए किन्नौरी में 'उ' या 'ऊ' का प्रयोग होता है जबकि थेबरस्कद में मुख्यतः 'रा' शब्द इस विभक्ति का द्योतक है, यथा –

किन्नौरी	थेबरस्कद
दामसु ची रानिच़ (बैल को घास दो)	दामस रा ची खेनना
चेइकू ओन ब–ब दू (सब को भूख लगी है)	अठड.ख रा ओन तु तो
निड.ानु तीसकर बदा (हमको प्यास लगी है)	निड.पड. रा तिसकर तो
लाडु. ती रानिच़ (गाय को पानी पिलाओ)	रत रा ती खेत्तिच़

करण कारक विभिक्ति 'से' और 'द्वारा' के लिए किन्नौरी और थेबरस्कद दोनों में एक समान 'च' और 'स' का प्रयोग होता है, यथा –

किन्नौरी	थेबरस्कद
रांकिस शियो तोक (गर्मी से/के कारण मर रहा हूं)	राबड.डू.स सींमा होंगू तोक
आखास काबो दू (दर्द से/के कारण रो रहा हूं)	अखास क्पु तोक/तश
कन दड.च़ जु कामड. मा हाचो (तुमसे यह काम नहीं होगा)	गियोरच़ आई लेन मा योंडी

सम्प्रदान के लिए' किन्नौरी में ताडे.स' शब्द प्रयुक्त होता है, जबकि थेबरस्कद में 'रा' शब्द प्रयोग में लाया जाता है, यथा –

किन्नौरी	थेबरस्कद
अड. ताडे.स खेरड. लिकशिस जारंई (मेरे लिए दूध लेकर आना)	अड. रा पेल किफु जिनची

अपादान 'से' के लिए किन्नौरी और थेबरस्कद दोनों ही बोलियों में कई शब्दों का प्रयोग मिलता है। यथा –

किन्नौरी	थेबरस्कद
दोअ अड. छड. कअ ज़िगिच़ दू (वह मेरे बेटे से छोटा है)	दोअ अड. छड. खू रच़ चिगित यश
बोठाड.ेच पथरड. दवादा (पेड़ से पत्ते गिरे)	बोठड.डू.च पथरड. दतु
दोअ अड. कअ तेग दू (वह मुझ से बड़ा है)	दोअ अडु.रच़ चेई तो
सोमिक्च निपि दोअ हतु ता पोचो दू (सुबह से वह किसी को तलाश रहा है)	नममत थलवा दोअ उड. रा ता कड़ू तो

सम्बंध के लिए दोनों ही बोलियों में उ/ऊ का मुख्य रूप से प्रयोग मिलता है। यथा

किन्नौरी	थेबरस्कद
राज़ऊ मेल (राजा का महल)	राज़ऊ मेल
रामु कोनयस (राम का दोस्त)	रामु कोनस/पंगगोत
राज़ाऊ चिमेदा (राजा की बेटियां)	राज़ाऊ च़मेदपड.
सोहन उ गासा (सोहन के कपड़े)	सोहन उ गोला
तोरोक्चु (आज का)	तोरोऊ

'रा' तथा 'री' के लिए दोनों ही बोलियों में 'अड.' शब्द प्रयुक्त होता है, यथा :–

किन्नौरी	थेबरस्कद
जु अड. रड. दू (यह मेरा घोड़ा है)	नोअ अड. शड. तो
जु अड. बोखोर दू (यह मेरी बकरी है)	गे अड. तेत तो

अधिकरण को लेकर दोनों ही बोलियों में एक समान विशेषता दृष्टिगोचर होती है। इस विभक्ति के 'पर' चिन्ह के लिए किन्नौरी में 'उ/ऊ' के साथ 'देन' और थेबरस्कद में उ/ऊ के साथ 'थोरिड.' लगाया जाता है। यथा –

किन्नौरी	थेबरस्कद
मलथडु. देन मीगा चा़व दू (छत पर लोग नाच रहे हैं)	मलथडु. योरिडं. मपिड. शोनु यश
दोअ आटडु. देन तोशिस दू (वह पत्थर पर बैठा है)	दोअ राउ थोरिड. पोसु यश

इसी तरह 'में विभिक्ति के लिए निम्न शब्द प्रयुक्त होते हैं :–

किन्नौरी	थेबरस्कद
अड. किम देशाड.ो दू (मेरा घर गांव में है)	अड. किम् देशडू. तोअ
छवा उरच़ो दू (अनाज कठार में है)	टापिन छुडु. तश
गासानु ताओ शैंई (कपडों को पानी में डालो)	गोलापड. रा तीऊ पिननिच़

सम्बोधन के लिए दोनों ही बोलियों में ओ/हो और या का प्रयोग मिलता है।

चरण सात – सर्वनाम

किन्नौरी और थेबरस्कद में सर्वनामों को लेकर अंतर स्पष्ट दिखाई देता है। कुछेक सर्वनामों में समानता हैं, लेकिन यह समानता अधिक नहीं है। उदाहरण के लिए यहां सर्वनामों के अलग अलग रूपों को दर्शाया जा रहा है। यथा :–

पुरूषवाचक सर्वनाम :–

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
मैं	ग	ग
मैने	गस	गस
मुझे	अड्.	अड.रा
मैं घर जा रहा हूं	ग किमो बीयो तोक	ग किमु जेऊडनोक
मैने सांप को मारा	गसीडसापासु सा–सा	गस सापस रा सतु
ळमें	निड.ा	निड.पड.

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
टाप	कि	गिरड.

निश्चय वाचक सर्वनाम

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
यह, वह	नु, दोअ	गियड.

अनिश्चयवाचक सर्वनाम

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
क्या, कुछ लोग	थद, इदड.के	छेअ

प्रश्नवाचक सर्वनाम

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
कौन	हद	हद / छेअ
उत्तम पुरुष		
मैं	ग	ग
ळम	निड.ा	निड.पड.
मेरा	अड.	अड.रा
ळमारा	निड.ानु	निड.पड.रा
मध्यम पुरूष		
टाप	थ्क	गियड.
तुम	कछ	गिरड.
तुम्हें	क्नु	गिरड.रा
अन्य पुरूष		
वह	दोअ	छोअ

वाक्यों में कुछ उदाहरण यहां दिया जा रहा है :–

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
मैने काम किया	गस कामड. लन लन	गस लेन लाऊ
मुझे बुलाओ	आड्. कुचिं	अड.रा कुतना
हमें जाना है	निड.ा बीमू	निड.पड.रा ज़ेमा तो

तुझे कहा	कनु लो–लो	गियड. रा लोऊ
तेरे पिता आए हैं	कन बौआ बअश	गियो अपा तुममिन तोश
तु सो	कअ यग	गियड. योनना
वह जाता है	दोअ बीयो दू	ओअ ज़ेई तश

चरण आठ – विशेषण

किन्नौरी और थेबरस्कद में विशेषण की प्रकिया लगभग एक समान है, मात्र शब्दों के उच्चारण ध्वनि के अंतर को छोड़कर जो इनकी अपनी मूल विशेषता है, यथा –

हिन्दी	किन्नौरी	थेबरस्कद
काला बैल	रोक दामस	खई दामस
काला कुत्ता	रोक कुई	खई खुई
यह कुत्ता काला है	जु कुई रोक दू	नो खुई खई तश
कालवाचक		
नया	न्युक	नुई
पुराना	उश्क	उशी
सांयं	शुपा	अदड. मुईया
आज	तोरो	तोरो
क्ल	नासोम	ञाइरो
पिछ्ला वर्ष	नोलिड.	नरब्या
स्थानवाचक		
अन्दर का दरवाजा	कुमोचु पितड.	नउचु पितड.
ऊपर	थवा	थोरिड.
नीचे	यवा	ओपड.
आकारवाचक		
टेढ़ा	खेर	खेरर
पतला	बागिच	नकीच़
लम्बा	लाम्बस	शुई
वर्णवाचक		
काला पायजामा	रोक सुतोन	खई सुतोन
हरा सेब	राक सेऊ	तीडी पाले
दशावाचक		
सूखी लकड़ी	छरसिड.	कोसी सीड.
बडा पेड़	तेग बोठड.	चेई बोठड.
छोटा पत्थर	जिगिच़ रूनिड.	चिगित रूनिड.
गुणवाचक		
भला आदमी	दम मी	मरी मी
सुशील आदमी	सादड. मी	ओनतड. मी
बुरा आदमी	मर मी	हलम मी
झगडालु आदमी	रोलटूच़ मी	रोलड. सा मी
सार्वनामिक विशेषण		
मैं	ग	ग
मैने	गस	गस

टाप	कि	गियड.
तुम	कह	क्न
यह	ज़ु	नोते
वह	दोअ	दोअ
समुदायवाचक		
दसों आदमी	साए मिगा	सायो मी
दो आदमी	निश मिगा	निश मी
दोनों गए	मिशी ब्यो	निशो जेऊ
तीनों गए	शुमकी ब्यो	हुमों जेऊ
मूलावस्था		
वह अच्छा लड़का है	दोअ दम छड. दू	दोअ मरी छड. तश
मेरी गाय अच्छी है	अड. लड. दम दू	अड. रत मरी तो
उत्तमावस्था		
उषा डोलमा से सुंदर है	उषा डोलमा का शारे दू	उशा डोलमा का शारे तश
उससे तुम अधिक जवान हो	दोअका की बोदी न्युंक तोंई	दोअ का गिरड. खुची नुई तोंई

सारांशतः कहा जा सकता है कि किन्नौरी और थेबरस्कद बाहरी रूप में देखने पर ही एक दूसरे से कतई अलग लगते हैं जब कि आन्तरिक रूप में दोनों में उतनी असमानता नहीं है। हां कुछेक विशेषताएं दोनों में अलग अलग हैं किंतु जब कुछ मूल शब्दों की ओर ध्यान देते हैं तो वे एक दूसरे से प्रायः भिन्न नहीं दिखते हैं। सहायक शब्दों में अंतर ही इन बोलियों को अलग अलग बिठा देता है। ऐसा प्रतीत होता है कि ये दोनों ही बोलियां एक दूसरे से प्रभावित रही हैं अन्यथा मी (आदमी), ती (पानी), दामस (बैल), आखा (दर्द), नाकित/नाकिच़ (पतला), सीऊ/शीमिग (मरना) आदि अनेक शब्दों में समानता क्यों होती? यही नहीं, सर्वनामों में भी समानता इस बात को स्वीकारने के लिए बाधित कर रहा है कि किसी समय यह दोनों एक ही बोली रही होगी। अन्य भाषाओं के प्रभाव और मानवीय देशान्तर के चलते यह अलग अलग टुकड़ों में बंट गई।

कणाशी

कणाशी – हिन्दी वाक्य

–बालक राम और तोबदन

हिन्दी	कणाशी
मैं जाता हूं	गू वंग तक।
मैं गया	गू वोगेक ।
मैं जाऊंगा	नाप बोग तंग।
हम सब जाएंगे	नी सब बोग तोंग।
लाल घोड़ा दौड़ता है	लाल घोड़ा ज़ादा ठोरा राटा।
वह क्या है	नू धोए तो।
मैंने पढ़ा	गू पढ़गेक।
अपने लिए पढ़ा	अनु ताईस पढगीक।
मेरी किताब	आका कुताब तो।
मैं घर में रहता हूं	कि वा नाशी तक।
कभी घर नहीं होता हूं।	के वी इ वो लेहता।
नदी पार होता हूं	देरांग नाशीन।
छिमेच	लड़की।

मलाणा ए स्वड.लो छुड.

– सतीश कुमार लोप्पा

स्वड.लो मीह्रे हिद अपिमि मेः सम्मा बेचे मलाण अपि इबि। दोर कि सद ज़ेम्बुलु घेपाडु, ककः गांसि क्वा। कुज़ः चे कुट्रःतोर जगथम कुचे दोकुतु इ न्वा ल शुबि, मनिकर्नो नाःडड. बरशेणी नगरड.। स्वड.लड. दोऊ मिन थसि म। घेपड. तेमिड. बे आ थल एनो ककःरड. दोई मलाण इउवा ल्हेई। श्रश्रेन घेपड.ज़े बोह्ल रम्तो भेइ गे ककः रड. दोइ यवातग, दड. दोमिड. शिल्ज़ि दु मलाण। अऊं करनम स्वड.लड. घेपड. हुचिमि शोतो दु श्रेल हचि मलाण। मलाणे यहचिता जम्बुलुइ दोबि दाःरू रञे चर्चि। शुर्तु इ बणः पूरे शुबि क्वा, घेपाडु. मिन्ज़े दोर। मलाणे यहचा अन्दा पूरेह ठठेःके हचि घेपड.।

घेपड. रड. इल्जि मीहचे कुट्रःतोर भेइ अञों हेल मलाण यवा धेंाणे हेल दोइ मलाणितिड. एनो इ चीःज पेपःतो। मलाणिंचे कुट्रःतोर क्वा कांह छाल म देर। शचिरिड. तो भेइ जम्बुलुइ घेपड.बि एनो इ ञिहजि आह रड. रणशिंग रन्ड्रिमि ल्हसि क्वा। छेइ ञेयःतोर अऊं सम्मो गप्पा शुदआ। मलाणिचे चेकतोर क्वा दि रणशिंग रेइञि सेइत ञेतु साःदु बहाण साते अच्चा योतोः, ञेतु सद ए यल्जे योतो त माह। ध्वां ल्हे दोचे तोग तचे मरांश्रि क्वा। इ सम्मा रिड. दीहए मुखे दुट्रो घेपाडु. डोश लेकि क्वा, मलाणि रे क्वा मेचिमि–गड.मि जोड़ी–जोड़ी शुआ, सुगिलि कुट्रा बेन्डिड. छवाड़ रमा चर्चि। थले घेपड. मनेःके, मसां रच्छा शुचि क्वा। ध्वंना शचिंरिड. तो स्वड.लड. अजापाड़ कुचे इ सद इट्रोत कुलज तो। मलाण ल अजयपाल कुचे इ सद तो। तुई दु जम्बलु कर्मिष्ट घ्यमा कारदार तोचि। द इट्रो करड़ा ए योनतनचन तोचि क्वा, थले मीचे दु साःद ट्रो मनेक्चि ठाहटेकतोर। द त्रेई–छगड़तु सद कुचे माःलो फाकचे छले मे मनेक्चि क्वा। गिबि चेसअ स्वड.लो अजापाड़ ए मलाणी अजयपाल इच्चे शुकु। घ्वां शु सेइत दि ल इ खास छड. शु हेन्द बिचड.।

तुइ मलाण रहागसतु राज तोचि क्वा। ज़म्बुलुइ अन्जे दोरे तुल्सि क्वा। दड. एनो राज ठाहरेक्श्रि। राज रेहठी ल्हेके ल प्रद सड. क्वा रहागसतु दूहए तेह तसि। रहागसतु रज़्ज़ा ज़े यहर्जा थल प्रद ए दोर कि रवाजा थलहेग्तु कुचे अर्ज लहसि क्वा, दड. जम्बुलुइ मनेक्सि। मलाणो प्रदपि कणाशी बोली कुट्रःतोर। दि प्राहदु म्हस्र छिग्से हेन्दु स्वड.लो बोलीतड. चिग्पःतोर। साःदेतु थल हेन्दु ञीहठू प्रदकुतु बिचड. ल छले मेः चम्बे छुड. शुबिमि भा चेसअ। ञेचा मीहचे शाचिमि जुस तो।

मिना साल तुइ सुदर्शन वशिष्टे इ पेचः चेयःते, व्यास की धारा। दोइ मालाःणो बोलिऊ राह चड़े छिग्से रांश्रि ततो। घों दोरिड.ज़े क्योमेद इच्चोह शुमु खण्णेऊ साःब स्वड.लो प्राहदड. साह चिग्पः। ध्यमा रऊ थले ञिज़ो श्रशुम छिग हेन्दिड. शुड.ज़ि अपअ। धें दि थोड़े मिग मशु । योड. रांश्रि छिगसे केन्ज़ेल खाई।

	कणाशी	हिन्दी	स्वड.लो भाषे (लाहुली)
1	गूह्	मैं	गेह (ग्यूह – मेरा) (पटनी)
2	शैणी	घर से दूर बना पशुशाला	छनि (पटनी), शर्नः (गाहरी)
3	रहात्	बैल	रद (गाय) (पटनी)
4	लाड.	ढोर	लड. (बैल) (गाहरी/तोद)
5	तिह्	पानी	ती (पटनी) सोति (गाहरी)
6	धरत	धरती	धर्ति (पटनी)
7	रातिड.	रात	राःत (पटनी)
8	कारग	तारे	करज़े (पटनी)
9	जोहद	कणक	ज़द (नंगा जौ की एक उतम प्रजाति)
10	भ्रेस	काठू	ब्रफो (पटनी) ब्रेऊ (गाहरी)
11	लाहड़े	आटे का चिलड़ ल्वाड़ (काठू का चिलड़ा) (पटनी/गाहरी)	
12	सुथ्थण	पाजामा	सुतःणः (पटनी)
13	कुर्ती	कमीज़	कुर्ति (पटनी)
14	टोपे	टोपी	टोबुडु (पटनी)
15	पोहण	रस्सी की बनी पूलें	पोउला (चमड़े का जूता) (पटनी)

16	घुंडू	सिर पर लपेटा जाने वाला ऊनी कपड़ा	घुंडु (पटनी)
17	लौंग	स्त्रियों का नाक का गहना	लौंग (पटनी)
18	कंठी	गले का हार	कंठि (पटनी)
19	बा	पिता	बाह (पटनी)
20	इया	माता	याह (पटनी)
21	छौंह	पुत्र	योह (पटनी)
22	चीमे	बेटी	चेमेद (गाहरी)
23	मामा	मामा	म्हमः (पटनी)
24	मामी	मामी	माअमि (पटनी)
25	बाफा	चाचा	क्वचि बबः (पटनी)
26	बा जेठा	ताया	मोड़े बाह (पटनी)
27	रहेंग्ज	बहन	रहिड. (पटनी) श्रिड. (गाहरी)
28	जलड	जुलाहा	जोल्हाइ (पटनी)
29	सरगड.	नीलम	सरगो ट्रो (आसमानी रंग) (पटनी)
30	रोक	काला	रोकिः (पटनी)
31	ईद	एक	इदि (पटनी)
32	निश	दो	ञिस (गाहरी) ञीह (पटनी)
33	शूहम	तीन	शुमु (पटनी) सुमि (गाहरी)
34	पूह	चार	पी (पटनी)
35	नाह	पांच	ड.ा (पटनी) ड.ाइ (गाहरी)
36	निज़ां	बीस	ञिज़ः (पटनी/गाहरी)
37	निश निज़ां	चालीस	ञिन्ज़ह (पटनी)
38	शूहम् निज़ां	साठ	शुम्ञिज़ः (पटनी)
39	कोर	निचला सदन	कोर (प्रजा/कबीला) (गाहरी/तोद)

मलाणा और लाहुल का संबंध

लाहुल के लोग स्मरणातीत काल से मलाणा आते जाते रहे हैं, वहां के देवता ज़म्बुलु घेपड. के बड़े भाई माने जाते हैं। कुल्लू के लोग कहते हैं कि उन दोनों का जगथम नाम का एक छोटा भाई भी है जो मणिकर्ण घाटी के बरशैणी गांव में बिराजते हैं। लाहुल में उनका नाम सुना नहीं। घेपड. कई कई वर्षों बाद अपने बड़े भाई से मिलने मलाणा जाते रहते हैं। श्रृश्रेन में घेपड. द्वारा देव–वाणी कहने पर कि मैं बड़े भाई से मिलने जाना चाहता हूं, तो उस बर्ष मलाण ले जाते हैं। जिस हेमन्त ऋतु में लाहुल में घेपड. को निकलना होता है उसी वर्ष ग्रीष्म /बर्षा ऋतु में मलाण लाया जाता है। मलाण से लौटते समय ज़म्बुलु उन को दार भेंट कर विदा करते हैं। कहते हैं कि वहां देवदार का एक पूरा जंगल घेपड. को समर्पित है। आते समय घेपड. को पूरा सजा कर ले आते हैं।

घेपड. के साथ गए हुए लोग बताते हैं कि वे जितनी बार मलाण जाते हैं उतनी बार मलाण वासियों से अपनी एक चीज़ मांगते हैं। मलाण वाले कहते हैं कि तुम्हारी कोई चीज़ यहां नहीं है। लाहुल में जनश्रुति है कि किसी समय ज़म्बुलु ने घेपड़ को अपनी एक सात मुखी रणशिंघ भेंट करने का निश्चय किया। जाने किस ज़माने की बात है, मलाण वालों ने सोचा कि यदि यह रणशिंघ हमने दे दिया तो हमारे देवता का बहाणु (शक्ति) भी उसके साथ चला जाएगा। कहीं हमारा देवता शक्तिविहीन न हो जाए। इसलिए उन्होंने आज तक नहीं दिया। इसी कारण एक समय घेपड. का ऐसा दोष लगा कि मलाण की युवक युवतियां सुगिलि (श्रेणी) गीत गाती हुई जोड़ी जोड़ी दरिया में कूद जातीं। बाद में घेपड. को मनाने के पश्चात ही रक्षा हो पाई ऐसी जनश्रुतियां हैं। लाहुल में कई लोगों के कुल देवता अजापाड़ हैं। मलाण में भी अजयपाल नाम के एक देवता हैं। पहले वे जम्बुलु के कर्मिष्ठ यानि कारदार थे। वे इतने तेज और ज्ञानवान थे कि लोग उन्हें देवता की तरह पूजने लगे। उसे भेड़ बकरियों के देवता के रूप में भेड़पालक बहुत मानते हैं। मुझे लगता है कि लाहुल का अजापाड़ और मलाण का अजय पाल एक ही है। यदि ऐसा है तो यह भी एक खास संबंध है, हमारे बीच।

कहते हैं कि पहले मलाण में राक्षसों का राज था। ज़म्बुलु ने आ कर उन को पराभूत किया। फिर अपना राज स्थापित किया। लेकिन भाषा राक्षसों वाली ही रहने दी। राक्षसों के राजा ने भाषा तथा रीतिरिवाज बदलने का निवेदन किया था जिसे ज़म्बुलु ने मान लिया। मलाण की भाषा को कणाशी बोली कहते है। इस भाषा के बहुत से शब्द लाहुल की भाषाओं से मिलते हैं। देवताओं के इलावा हमारे इन दो समुदायों की बोलियों में बहुत निकट का संबंध है ऐसा जान पड़ता है। विद्वान लोगों द्वारा इस पर शोध करने की आवश्यकता है।

सुदर्शन वशिष्ट ने एक किताब लिखी थी, ब्यास की धारा। इन्होंने मलाण की बोली के सौ से अधिक शब्द संकलित किए है। उनमें से लगभग एक तिहाई लाहुली बोलियों से मिलती हैं। अर्थात सौ में से तेंतीस शब्द हमें समझ आते हैं यह कोई कम संख्या नहीं है। आप भी देखिए और सोचिए।

दम थाक्पा, दुड, बेरका

–रणधीर मानेपा

तोतोकिचा। इचा क्युमूनांग क्यांगचा रांग क्यांगती तोकिचकू। दोट्रो गाठे क्युमुंग मति तोकिचकू। ड॰शे सिला ज़ई सेता फितो तुरकेन मति। ञीर शोद ज़ई सेता ड. थोफितोग ज़मीन मति। इचा जाड़ क्यांगची, क्यांगतीरिंग कुमिचा मुनतांग मन्चेची ख्यासू कमाची इल्ला कुमिचा। ड॰रोची क्यांगती क्यांगचरिंग कद लमीची अन्चू वे तोग गी कमाची इलतोग। क्यांगची अचांगरिंग ड॰ स्रुम ऐट्रा वेग नांग केकि चरमिचा। क्यांगती नीरजाड आम्ची, फितो तक छगकी इमिचा। योश तिसकर अमिंचा। वेग नांग जी ऐट्रा फिरकन हेमिन्चा अई मिकसिमिची। मिगकी थलांग कुमिचा दी ड. नंग जी स्रुमू ज़ई सेत् ञीजी किश्नाग कुमिचा।

ञीजी ज़ई सेत स्रुमू किश्नाग कुमिचा। फुईनो तुम्पोरिंग जंगलांग ब्यौर ब्यौर कुकि टू होसिची। दोड॰ ड॰मी आछे नुकरे जोकि तोकिचरे। दोचि दी शोब थसकिम्चरे। डम्मी आछे नुकरे इन्जतू विचांग खमीनचरे। इन्जतू विचांग छज़ि इलमीचरे। आछे नुकची थेज़िरे तोग इनाकू वारी अन्ती। दी स्रीनपो इना वाते ज़वा। स्रिन्पो कुशाग वे ड॰ नंग जी स्रुमू ज़ई सेत ञीजी किश्नाग। ञीजी ज़ई सेत् स्रुमू किश्नाग।

क्यांगतिउ दी शोव थस्पी रांग ञम्पो आछे नुकते वे वडवे हाट्टी आछे ग्यारका रम्वा रम्वा दू क्यांगतिउ कचांग पिट्र। आछे दू मिन वलू वलू जी तांगची लगकी चरमिच हां कुडू वे कई खी कुशूतोरिंग। ड0 नंग जी स्रुमू ज़ई सेत ञीजी किशाग ञीजी ज़ई सेत किश्नाग। कई सांग डे॰ने आछे नुकरे ज़ई अमिन् मा। क्यांगति कुमिचा ऐ होन मशुदा गी दिंग कमाची अमिना। वल्लू ज़ी कुमिचा कई दिंग खेल्ले थज़ुउ कुमिचा। कनिंग गी इचा खुफद रन्टाग कुमिचा। खुफद स्रोड़िंग किट्रि वे तुंगतुंग सखेद वोलीगतू। दोरांग स्रोडिंग क्यू। छोदमे लउ। योज़ा दू खूफूदतींग गा केहू। दिंगज़ी खुफद शिली सेत् नारना केनाकू क्युमुंग शीला। आम्चांग ख्यांगलो थक्यू। क्योमेद फितोग शुकिए आमिन्चा।

क्यांगती खुफद कुरची क्युमूरिंग इमिचा। आमचांग दोरिंग थिवपन् ुमन्दाग शुकि इमिचा। इचा क्युमुंग चिना में तांगमिचा। दू क्युम कचांग पिपिरांग ञम्पो पितांग ट्रलमिचा। क्युमनांग ज़ी क्यांगची कद लमीची। हो अरे शुना फिरिंग। क्यांगती कुमिच गी शुक्का कुमिचा। क्युमुरिंग इवि तोरिग वे मुन्दाग शुगकी इति। क्यांगची पितांग आलमीचा। क्यांगती कुमिचा शव्वे जू। इचा फिरो जोपि रंगू कुमिचा। गी ड.रो मोदिगंजी क्युमूरींग इल्तोग कुमिचा। शवे केन्तींग क्यांगचीरिंग कुमिचा। नारकन् अन्ता। क्यांगती ञम्पो खुफद ला शीमिन्चा। नांग पिक्यो क्यांगचा दोम दोम शुगकी जोमिन्चा। क्यांगती इन्जू वेगनांग स्रुम ऐट्रा होन्ती। इचा फेछांग दू क्यांगचरिंग रणी। जीजीली जरिकू। दोसवी वे तुंग तुंग क्यांगती दू क्यांगचरिंग कुड़ी कई ग्यु चालागतींग पाच थरोणो। खुपद दिरकन–नूरकन थलू। वोलिग थवोलिगतू। कचांग छोदमे थलु। योज़ा ट्रो गा थरूणु में। दी कुकी थलांग क्यांगती खोर खोर लवपा इवसांग ईमिचा। क्यांगची थेज़िचा ख्या न ख्या दी चालग जादू ट्रो हिच। फेद रातरिंग क्यांगचा अनचिमच। अन्वी थलांग इताग सखेद वोलिंगमिचा। दू टोगरिंग खूपद केमिन्चा। छोदमे लमिन्चा। दोरांग योज़ा ट्रो दू खूपद तींग गा केमिन्चा। गा केकि थलांग दू नांगज़ी जमीनते होसीमचा। ड॰गरो गा केकिसेत सीला लारे कुल्डू होसमिच। ञीर गा केकि सेत शोदते होसमिचा फितो गा केकि सेत् होसमिच। ट्रे मना दू क्यांगची खुपद नांग उरचांग प्यागकी की। दू छवतिंग नकली खूपद क्यांगतिउ मासा कचांग केकि की। ड॰गरो अन्चीरांग ञम्पो क्यांगति दू खुपद कुरची इन्जू क्युमूरिंग बोन्ट्री। क्युमुंग मपिपतरो क्यांगति इन्जू क्यांगचारिंग अईन शचेन ट्रो कद लज़ा। ऐ ग्यु क्यांगचा कनिंग गी इचा खुपद हमिन। गी दोंग पिपीतोग तां कंई सखेद वोलिकी योगतू। क्यांगची यूरना वोलिगती। तां क्यांगती नांग गे पिड़ि। पिपिरांग ञम्पो क्यांगती खूपद श्रोणिंग की। छोदमे ली। योज़ा दू खुपुतिंग गा की। खेले मशुमिचा। क्यांगची कुमिचा इन्जू क्यांगतिरिंग खी हमीन दी नकली खुपद। फिरिंग शी क्यांगची ञीजी दुम्बू लगकी चरमिचा। ड॰गरोचि आसकी क्यांगती इन्जू क्यांगचरिंग कद लमिचा। गेरिंग होल अमचांगरिंग ड॰ सुम ऐट्र केउहो। क्यांगची वेगांउकी क्यांगति स्रणफर होसि ईवा। पिड़तर पिड़तर दूए नसांग पिपा। दू वेगनांगजी ऐट्रा होन्चा। होला दूए कुट्रा ड.नांग ज़ी सुमू ज़इ सेता ञिजी किशाग। ञिजी ज़इ सेता सुमू किशाग। फुईयो तुम्पीरंग जंगलांग टू व्यौर व्यौर होसा। होला डण्मी आछे नुकतींग पस्पाग। वडवे हटिग आछे कुमिच सुलू दी फेरा का ईल्ला। सुलू ज़ारका रम्मा रम्मा दू मीउ कचांग पिपाग। सुलूई कुमिच क्यांगती आचो कई डे.ने थजउ। दोविची कनिंग गी चालग गम रन्टाग। गम दी कई आमचांग ख्यांग ला थक्यू। नारना केनाकू क्युमुंग आलू। ख्यांगती दू गम कुरचीरि। कुरचा कुरचा होला दू

क्यांगचू क्युमुंग कचांग थिपन् मुन्दाग शुपा। मुन्दागतिंग क्युमूरिंग ईली सेत दू जंगलांग बोड. सिनपोरे शुपि। क्यांगति वेई तुम्पोरिंग ईवि मरेबा। दू क्युमुंग पिपिरांग ञम्पो नांग चीना लोग तंगपा। क्यांगतिपितांग ठलछाग। क्यांगचा छांग कुरचि फिरिरिंग होसा ओ केनांग अन्तीतेआ। दोरिंग यशा प्रावा। नांग शी दोई क्यांगती सुरि। ञिशी ञिशी वन्डुंग ज़मीन रणी। दोरांग ञिशी दोसपिरिंग मासा रणी।

क्यांगति इन्जू खोर खोर लवपा दोजिरी। दोसपी वे तुंगरिंग क्यांगति क्यांगचरिंग कुड़ी वे क्यांगचा कई ग्यु चालग गमतिंग पाच थरूणू। वोलिग थावोलिगतुग छोदने थलू। ग्यू गमरिंग डोंग जी गा थरूणु। क्यांगचा मसांगजी अन्चीम्चा। अन्ची थलांग इताग छांग तुवकी क्यांगतिरिंग खमिन्चा कि ताजीत् माचया। दोरांग योजा योजा चाग गमतींग पाच रमिन्चा। सोणिंग वोलिगमिन्चा। छोदमे लमिन्चा दोरांग डोंग जी योज़ाट्रो गा केमिन्चा। गा केकि थालंग दू गम नंग जी पाटे पाटे यद होसमिचा। गोशनू यदते होसमिचा। नांग तोंग क्युंग ठक्कन गोशनते गोशन शुमिचा क्यांगचा थगकी सा शुकी ईमिन्चा क्यांगची ड.रो शुतर शुतर चालग गम लेगकी केमिन्चा नकली गम हंगकी दू क्यांगतिउ मासा कचांग केकि केमिन्चा। ड.रोची क्यांगति दू चालग गम कुरची क्युमुरिंग वोन्ट्री। क्युमूंग पिटर पिटर होला क्यांगती इन्जू क्यांगचरिंग कद लमिन्चा। कुमिन्चा ए ग्यु क्यांगचा नांग वोलिगकी कियो। तोग कनिंग गी चालग गम हमिना। नांग पिपि रांग ञम्पो क्यांगची वोलिगसी ताज़ा। छोदमे लसी ताज़। डोंगला छागकन् लसी ताज़ा। क्यांगती दू गम हंगकी सोणिंग की। योज़ा दू गम रींग डोंगी कि। खेले नशुई। क्यांगची इन्जू क्यांगतिरिंग कुमिन्चा दी खी हन्चीतोन् खेले मोसा ए। खेले मशूपदे। क्यांगची दू गम फिरिंग शी करगी रंगी ञीजी दुम्वू लगकी चरचाग।

दू थलांग आसकी ईवा। दोंग जंगलांग पिपिरांग ञम्पो सुलू नुकी हुलू पीपांग आसकी दोरांग कुशाग वे कई डे.ने जेते थज़उ। कनिंग गी इच तोगंपा वेग रन्टाग। होल्ला दू क्यांगति् क्यांगचू दोंग पिपाग। क्यांगची दू क्यांगतू यशा लज़ा क्यांगतिरिंग ञीशी ञीशी मासा रन्टाग। क्यांगति दोसवी वे तुंग तुंग होला तुंगरिन चोकने कुशा कि वे वोलिग थवोलिगतू दोरांग क्यांगची वोलिगचा छोदमे फारचाग योजा दू डोंग जी तोंगपा वेगरिंग गा किट्राग। गा किट्रिरांग ञम्पू वोंग शुगू डव्वा होसा। इच खंगमिग द्रगकन शुगू डव्वा वींगी इवाग। डणरो शुवपे तुंगतुंग क्यांगचीदू नकली वेग ट्रेमना मासा कचांग केकि किट्राग। क्यांगति अन्चीरांग ञम्पु दू तोंगपा वेग कुरची क्युमूरिंग वोम्पाग। क्युमू कचांग पिपिरांग ञम्पो तुंग तुंग क्यांगति इन्जू क्यांगति कद लजाग। क्यांगचा गी पिडिग। तां कई वोलिगकी क्यू। वोलिगकी थलांग ओने नांग पिपाग। तोंगपा वेग स्रोणिंण किट्राग। छोदमे तुपचांग क्यागति डोंग ज़ी योज़ा ट्रो तांगपा वेगरिंग गा केट्राग। गा केकि थलांग खेले मशुपा। क्यागची दू तोंगपा वेग ञीशी लगकी युगकी शिलचाग। क्यांगची क्यांगतिरिंग गाड़ दावड़ रन्ट्राग। खी कई डे.ने वमकी थेज़ी ततना। कोडी आतू रन्डू क्यांगति। छोग लउ दि कयोरवी। पुला ज़ई रण्दू दीवे इनाग योंगी जोतोई। इच़ जांड़ होल क्यांगति क्यांगचरिंग कुडि वे गी मुन्तांग होल ई तोग। क्यांगची क्यांगतिउ गाणे मककी गी महिग कुप्पा कुप्पा खेई नमुंग अन्ची इलि। क्यांगति कुडी शव्वे जू ओन थलिगसू। दोरांग होल्ला ड.ारो क्यांगति शोद कुरची वोन्ट्री। होलला तुंगरिंग दोडे. पीड़ी। क्यांगति होल्ला ञिकति कुड़ी वे ड.ा नांग जी स्रुमू ज़ई सेत् ञीशी किशाग, ञीजी जई सेता स्रुमू किशाग । टू व्यौर व्यौर होसी दोंगजी हुल्लू नुका गुल्लू जारका रंगी अन्ती। अम्पीरांग ञम्पो होल कुशाग कई डे.ने थज़उ कनिंग गी इच चलाग रन्टाग। कनिंग इच मा रन्टाग। मा कुरची होल्ला दू क्यांगज़ू क्युमुंग क्चांग पिपिरंग ञम्पो थिवपन मुन्दाग शुकि ईवाग। नांग पीपिरांग ञम्पो टू क्यांगचो क्यांगतू यशा लजा। ञीशी ञीशी तुंगरिन चोगकन् ज़मीन रण्ट्राग, सुचाग ञीशी ञीशी खम रण्ट्राग। क्यांगति होल्ला दोसकी वे तुंग तुंग क्यांग चरिंग कुशाग कई दी मा थचुरो। क्यांगती होल्ला स्रु स्रु खोर खोर लवण इवसांग इमिची। ट्रेमना क्यांगची दू मा चुरमिचा। चुरचिरांग ञम्पो पालमोरांग जांग मुल्ते मतिरचू जगहरींग टुकरे कन्ट्रीरे होसमिचा। क्यांगचा दी चालगते खण्गी सा शुकि इमिची। ड.रो शुतर शुतर मां लेगकी मासा कचांग स्रांगरांग ञम्पो के कि केमिचा। ड.रोची क्यांगति मां कुरची इन्जू क्युमुंगरिंग वोन्ट्री। क्युमुंग मपिट्रितोरी क्यांगति इन्जू क्यांगचरिंग कद लमिचा। ओ क्यांगचा कुमिच तोग कनिंग गी दोर हमिन। वोलिगकी योगतो कुमिचा। क्यांगची वोलिंग मीचा छोदमे लमीचामा चुरमिचा। पालमो जैते होसमिचा पालमो म्यागमिन्चा। खेल्ले मशुमिन्चा। क्यांगचि थोश लवपा लवपा फिरिरिंग शिमिन्ची। कारगी रंगी वालोग टुवपन होमिन्चा। ञीरझाग स्रुमग्याग छत्ती तुगुमिन्चगू। छोसकी दोस्की जोमिनचकू। छेकडोग्याग होल्ला क्यांगती ड. ऐट्र कुरची वोमिन्चा। दू शींगनागतुंग पिड्रतरो योश अमिन्चा।

होल मिगमिन्ची ड. नांग जी सुमू ज़ई सेत जीजी किशाग जीजी ज़ई सेत सुमु किशाग। ड.मी आछे नुकची होल थसमींजी। दी क्यांगती रिंग शुई खी। जागतंग अम्पा। बदवे फंची नुका अमिन्चा।

दोई कुमिन्चा डे.ने चालग ट्रो रन्ट्री तोरियां मा कई दू चालाग ते (शाक्या) सीधा क्युमुरिंग शीलची तोतोन मा। क्यांगती कुमिचा गी इचा फिरो सीन्पो क्यांगचु दोंग जो कि तोरीग। वदवे फेची नुकि कुमिचा ओ हो दि खई खी लमिन। डे.नेता कनिंग जीशी जीशी चालग रमिन। फेची नुकि कुमिचा कनिंग गी तोग इच़ डोंग रंग रशी रण्टागू दू राकसीणी क्यांगचू दोंग पिकियो कई दम थगपा दुंग वेरका कुडू कुमिचा। दू रशीरांग डोंग कुरची फिरो दू क्यांगचु दोंग पीडी क्यांगची इताग क्यांगती सुरि। जीशी जीशी गोशनते याद रणी डव्वाला रणी। क्यांगती होल दोस्तोरो क्यांगचरिंग कु मिन्चा कई थम थगपा दुंग वेरका थकुड़ो कुमिचा। क्यांगती होल खोर खोर लवपा इवसांग ईमिन्चा। क्यांगचा ड.रो शुतरो शुतरो क्यांगतिउ मसांग कचांग अमिन्चा। इताग वोलिंगमिचा छोदमे लमिन्चा। दोरांग कुमिन्चा दम तक पिगकी ईमिन्चा। रशी इताग टोग टोग शुगकी तोकिचा। कुट्री रांग जम्पो रशी दू क्यांग चरांग ग्रीलगी ईमिचा। दुंग वेरका ज़ी गा रंगी कोकी शिमिन्ची। क्यांगचू अति शुगकी ईमिन्चा। रशी ग्रीलज़ा ग्रीलज़ा खोंगजांग तक पिगकी ईमिन्चा। दोरांग क्यांगची क्यांगतिरिंगि कुमिचा केनाग अनचुति। गेरिंग दी रशिरांग डोंगज़ी जुगज़िग माल ट्राव ट्रावना होंगकी की। ग्यू युतनाता तांगची लगकी की। क्यांगति अन्चीरांग जम्पो क्यांगचु जुगज़िग रशी फमिन्चा। डोंग वालोगतिंग चौकसी जोमिन्चा। दू हामिन्चा। दोरांग क्यांगची तुंगरिंगी शोव वाते होन्ती। क्यांगति दू रशिनांग चालाग गम तोंगपा वेग मां शुई अई खुपद वाते डव्वा रे, गोशन यदते वाते कुरलमिन्चा। क्युमूंग कचांग पिकियो इन्जू क्यांगचारिंग होल शचन–शचना कद लमिन्चा। क्यांगची गाणे मकमिचा। खेई नमुगं अन्ची ई दोसकी जोमिन्चा अई कुमिन्चा दी क्यांगती ओनडिगे शू। युदतन गाड दोवड़ रंगी चरमिचा। क्यांगति कुर कुरची इन्जू सावरिंग पीमिन्चा। धमकी ईमिन्चा। क्यांगचा रवन्टी इतग नंग ईमिन्चा। नंग ई थलांग क्यांगचू पांग चुमिन्चा अई कुमिन्चा जू शब्बे अन्चू कुमिन्चा। खण्डु कुमिन्चा गी खी हमिना। दोरांग क्यांगचा अन्ची रांग जम्पो इताग वोलिगमिचा। छोदमे छागकन लगकी योगमिचा। क्यांगती दू चालगते आसकी कुर लगकी हमिन्चा। क्यांगचा दू चालगतींग खण्णी सा शुगकी ईमिन्चा जांग मुलते, शुगू डव्वा रे, गोशन यदते खंगी जीमिला छुगपो शुकि ईमिन्चकू। इच़ जांड क्यांगची क्यांगतिरिंग कुमिचा मुन्तांग ड़ु.रज़ाग ईनाकी दिंगगी ज्ञालपो ज्ञालमोतिंग ड्रोन रन्ट्रंग मां।

क्यांगति इन्जू योगपो चरती कुडू कुमिचा डे॰न दोंग मुन्तांग ड्रोन शुद्ध वाते अन्ची अन्तीचियो। दू कुकि थलांग ज्ञालपोरांग ज्ञालमो वामिचकू। हाहा खेने रन्ट्राग इनागतिंग दिकुचि ड्रोन। मुन्तांग खन्ट्रीई मुन्तांग ड॰रो पिपिरांग जम्पो ज्ञालपो ज्ञालमो दोकितिंग खंगगी सा शुक्की इलिगूकू। ऐकि तक दोगकू उलवो (गरीब) तोरिगकू तोग जीमिल छुगपो शुकि ईलिगक दी खेन शुई। ज्ञालपो जी क्यांगतिरिंग रूकचा। क्यांगति कुशाग होई शींगनांग दोंग (जंगलांग) ड॰मी आछे नुकर रे तोरिरे। दोचिः ड.॰नतिंग इताग खुपद रणीरे। दोरांग चालग गम दोरांग तोंगपा वेग दोरांग इच मां रणीरे। ज्ञालपो कुमिच दी चालग वाते डे.नतींग रंगू कुमिचा। क्यांगति चालग वाते रंगीचरमिचा। आसकी जीमिला उलवो शुगकी इमिनचेकू। इच़ जांड होल क्यांगती ज्ञालपो दांग चालग ते येट्री ईमिन्चा। ज्ञालपो कुमिन्चा गी चालग ते मारतोग। कई खी लतान। गी अतांगला वेइ मातोग। गी मगपोन वोंग तताग। गेरिंग अचिल या अरेल वेई मातोरे। चालग हिनचिम शुई सेत ईताग गेरांग जम्पो तेंगज़ी (माग) पडीगपा। अरे ज्ञली दोई दू चालग वाते शिलतू। क्यांगति सेमुंग सेमुंग कुशाग या तचड ज्ञालपो दी दम थगपा दुंग वेरका लगकी खेन कोकि शिलताग में। ज्ञालपोई क्यांगतिरिंग कुशण मुनतांग माग शुद्ध। इनू मागते जम्पो कुरची अन्तो। ग्यु इंगू नागते मागपोन वाते छागकन शुगकी तोतोरे। ड॰रो वाते ज्ञालपोजू मागरे छागकन शुगकी जोमिन्चरे। तां योज़ा योज़ा क्यांगती रशी रांग डोंग कुरची माग थांगरिंग पीपाग। ज्ञालपो वापग हा हा कुकि कणु कनू मागपोन ते। क्यांगती कुमिचा गी इंगे मागपोन शुक्का। गी इगे माग शुगका। ज्ञालपू मागची क्यांगतू दयोनोसी गोडिके अन्तीरे। क्यांगति जुंगरिंग पिगकी थलांग दम थगपा दुंग वेरका कुमिन्चा। ज्ञालपोजू वाते मागते रशीरांग जम्पो ग्रीलगी चरमिचा। डोंगजी वाते मागतिंग तेंगगी चरमिचरे। ज्ञालपो मांग वाते सी इमिन्चरे। ज्ञालपो जी क्यांगतिरिंग कुमिन्चा का ग्यालिना चार। इनू चालग वाते लेन्ची इल्ला कुमिन्चा। क्यांगती इन्जु चालग वाते हमिन्चा। ज्ञालपो जी रेट्र चुग्चा दिवे थलांग गी करांग जम्पो माग मलाताग। क्यांगतिरांग क्यांगचा आसकी छुगपो शुमिन्चा।

थुकजे छे।

रस्सी से बांधो और डंडा मारो

एक गांव में बूढ़ा और बूढ़ी रहते थे। दोनों बहुत गरीब थे। सुबह का भोजन खाएं तो शाम को नसीब नहीं होता था। दोपहर को भोजन करें तो सुबह शाम खाना नसीब नहीं होता था। एक दिन बूढ़े ने अपनी बुढ़िया से कहा कि मैं कुछ कमाने के लिए दूर जंगल की तरफ जाउंगा। शायद मुझे कुछ काम मिल जाए। बुढ़िया ने उसके लिए दोपहर का खाना गिनकर पांच रोटी बोटुडू के अंदर डाला। दिन भर चलते चलते भूखे प्यासे एक घने जंगल के पास पहुंच गया। खाना खाने के लिए नीचे बैठ गया। अपने बैग से रोटी निकाल कर देखा और कहने लगा। पांच में से तीन खाउं तो दो शेष रह जाते हैं। दो खाउं तो तीन रह जाते हैं। सामने ही उसी जंगल में पांच बहनें आग के पास बैठी विचार विमर्श कर रही थीं। बूढ़े की बात उन पांचों बहनों ने सुन ली और कहने लगे पांच में से तीन खाएं तो दो रह जाता है। दो खाएं तो तीन रह जाते हैं। सभी बहनें डर के मारे चुपचाप बैठे हुए थे। उतने में सबसे बड़ी बहन बलू दौड़ मारते मारते उस बूढ़े के पास पहुंच गई। कृपया आपने हमें खाना नहीं। इसके बदले में आपको (खुपद) पत्थर की बर्तन दूंगी। मगर यह बर्तन आपने अपने घर में ही खोलना। रास्ते में कहीं भी नहीं रूकना।

बूढ़ा उस बर्तन को उठाकर अपने घर की तरफ जाता है। चलते चलते आधे रास्ते में ही रात हो जाती है। उस जंगल से गुजरना बहुत मुश्किल होता था। चारों तरफ राक्षस ही राक्षस होते थे। बूढ़े ने सोचा कि क्यों न रात यहीं किसी के पास गुजारें। सामने ही झाड़ी में एक घर दिखाई देता है। बूढ़ा उस बर्तन को लेकर उस घर के पास पहुंचता है। पहुंचकर उस घर में रह रहे आदमी को पुकारता है। दरवाजा खटखटाता है। इतने में अंदर से एक बूढ़ी जो कि राक्षसी होती है, बाहर निकलती है और बूढ़ा उस बूढ़िया से एक रात के लिए शरण मांगता है। बूढ़िया पहले तो साफ इंकार करती है। मनाने के बाद फिर बुढ़िया मान जाती है। बूढ़ा अंदर आकर पत्थर वाले वर्तन को अपने समीप रखता है। बूढ़ी बूढ़े को ना खाना खिलाती है और न ही सोने के लिए कुछ कपड़े देती है। सोने से पूर्व बूढ़ा उस बूढ़िया से कहता है कृपया आपने मेरे वर्तन को छूना नहीं। न ही ज़मीन पर लिपाई करना और न ही दीया जलाना और न हीं इस बर्तन को ठोलू से धीरे से मारना। (क्योंकि यह सब बातें बलू द्वारा बूढ़े को समझाई होती हैं।) बूढ़ा सो जाता है और बूढ़िया को हमेशा सपने में यह ही बात आती है कि इसे छूना नहीं, लिपाई नहीं करना, बगैरा। आधी रात को बूढ़िया जाग जाती है। पहले उस वर्तन को छूती है। गोबर से लिपाई करती है, दीया जलाती है और वर्तन को लिपाई की गई जमीन पर रखती है फिर आराम से उसे ठोलू से मारती है। मारने पर उस (खुपद) वर्तन से तरह तरह के पकवान, तरह तरह के खाना निकलते हैं। वह राक्षसी खुश हो जाती है। चुप चाप रातों रात उस वर्तन को छुपा लेती है। रातों रात वो ही वर्तन जैसा नकली बनाकर उस बूढ़े के समीप रखती है और राक्षसी सो जाती है। सुबह होते होते बूढ़ा उस वर्तन को उठाकर घर की तरफ जाता है। घर पहुंचने से पहले ही अपनी पत्नी (बूढ़िया) को जोर जोर से आवाज देता है। हे बूढ़िया मैं आपके लिए एक वर्तन लाया हूं कृपया आपने अंदर लिपाई कर देना। लिपाई करती है और बूढ़ा वर्तन को लेकर घर के अंदर ही पहुंच जाता है। उस वर्तन को जहां गोबर से लिपाई किया गया था उसके उपर छोड़ देता है और बूढ़ा दीया जलाता है। धीरे से उस वर्तन के उपर हथौड़ी मारता है। हथौड़ी मारने पर कोई क्रिया कलाप नहीं होता है। बूढ़ी उस खुपद को कुल्हाड़ी से मारकर दो हिस्सा कर देती है।

अगले दिन फिर से बूढ़ा उसी दिशा की तरफ चलता है। बूढ़िया उसको खाने के लिए फिर से पांच रोटियां देती है। आगे जंगल पहुंचकर फिर से रोटी गिनता है। पांच में से तीन खाउं तो दो रह जाते हैं। दो खाउं तो तीन रह जाते हैं। सामने उसी जंगल में फिर से यही बात उन्ही पांच बहनों को सुनाई देती है। सभी फिर से डर जाते हैं। सबसे बड़ी बहन से छोटी बहन सूलू दौड़ कर उस बूढ़े के पास पहुंच जाती है। सूलू कहती है कृपया हमें खाना नहीं। हम आपको एक लोहे का वक्सा देते हैं। कृपया आपने यह वक्सा अपने घर में ही खोलना। बीच रास्ते में नहीं खोलना। शाम होते होते बूढ़ा उस जंगल से अपनी घर की तरफ चला जाता है। फिर से आधे रास्ते में पहुंच कर रात हो जाती है। रात को फिर से उसी बूढ़िया के पास आश्रय लेना पड़ा। घर के पास पहुंचकर बूढ़ा फिर से दरवाजा खटखटाता है। दरवाजा खटखटाने से राक्षसी नहा धोकर हंस मुख द्वारा दरवाजा खोलती है। कहती है महाशय जी आईए बूढ़ा धन्यवाद कहकर अपने वक्से को अंदर ले जाता है

और तकिए के सामने रखता है। बूढ़िया पहले बूढ़े को नहलाती है मालिश करती है आदर करती है जलपान एवं तरह तरह के भोजन करवाती है। बूढ़ा फिर से सोने से पहले सूलू के कहे शब्द कहता है कि कृपया इस वक्से को छूना नहीं, लिपाई नहीं करना। दिया नहीं जलाना और धीरे से हथौड़ी द्वारा इस वक्से को नहीं मारना। यह शब्द कहकर बूढ़ा सो जाता है। आधी रात को बूढ़िया जाग जाती है उठकर पहले की भांति लिपाई करती है। दीया जलाती है और धीरे से हथौड़ी द्वारा उस वक्से पर मारती है। मारने पर तरह तरह के कपड़े रंग विरंगे एवं तरह तरह के रेशम के कपड़े निकले। दोनों कमरे कपड़ों से भर गए। बूढ़िया ने उस वक्से को चुपचाप छुपा दिया और एक नकली वक्सा लाकर बूढ़े के तकिए के समीप रख दिया। सुबह होते होते बूढ़ा जाग गया और उस वक्से को उठाकर अपने घर की तरफ चल दिया। घर के पास पहुंचकर बूढ़ा चिल्लाने लगा। बूढ़िया मैं वक्सा लेकर आ रहा हूं। कृपया लिपाई करके रखना बूढ़िया लिपाई करती है और दीया भी तैयार करके रखती है। बूढ़ा उस वक्से को लेकर अंदर पहुंच जाता है। पहुंचकर वक्से को जहां लिपाई किया हुआ था वहां पर रखता है। दीया जलाती है और धीरे से हथौड़ी द्वारा मारती है। मारने पर कुछ नहीं होता है। बूढ़ा फिर मायूस हो जाता है। कुल्हाड़ी द्वारा वक्से का दो हिस्सा कर देती है।

तीसरे एवं चौथी वार फिर से जाता है। पहले की तरह पांच रोटी ले जाता, फिर से गिनता। तीसरी बार पांच बहनों में तृतीय बहन हूलू बूढ़े को खाली बैग देती है। खाली बैग से नोट निकलते हैं। चौथी बार मूलू भेडू देती है। भेडू के मल के साथ तरह तरह के वस्तु जैसे सोना निकलते हैं। अपने घर पहुंचकर कुछ नहीं निकलता है। बीच में राक्षसी ही गायब कर लेती है। बूढिया मायुस होकर खाली बैग एवं बकरी को कुल्हाड़ी से दो टुकड़े कर देती है। भेडू का मीट कई दिन तक खाया।

अंतिम क्षण में एक बार फिर से बूढ़ा अपनी बूढी से आग्रह करता है कि मुझे कल फिर से उन बहनों के पास जाना है। बूढिया पांच रोटियां बैग में डालकर देती है। बूढ़ा चल पड़ता है चलते चलते काफी देर तक बूढा उन पांचों बहनों के नजदीक पहुंच जाता है। पहुंच कर फिर से रोटियां गिनता है। पांच में से तीन खाउं तो दो रह जाते हैं दो खाउं तो तीन रह जाते हैं । यही बात फिर से उन पांच बहनों को सुनाई देती है। सबसे छोटी बहन दौड़कर उस बुजुर्ग के पास आती है और कहती है आप बार बार यहां क्यों आते हो, बार बार क्यों गिन रहे हो। छोटी बहन ने पूछा कि कहीं आप घर जाते वक्त बीच रास्ते में तो नहीं रूकते हो। बुजुर्ग कहने लगा, जी हां जरूर मैं रूकता हूं। मुझे यहां से जाते वक्त रात हो जाती है। इस बार मैं आपको एक डण्डा व एक रस्सी देती हूं।

बूढा उस सामान को लेकर फिर रात होते होते उस राक्षसी बूढ़िया के पास पहुंच जाता है। बूढ़ी पहले ही द्वार के पास खड़ी होकर उनका स्वागत करती है। अंदर बुलाकर खूब सेवा करती है। नहलाती है अच्छे अच्छे पकवान खिलाती है। सोने से पूर्व फिर से बूढ़ा उस बूढ़िया को कहता है कृपया इन सामानों को तकिया के पास ही रखना सफाई नहीं करना। दीया नही जलाना और *दुड़. वेरका दम थगपा* नहीं कहना। बूढ़ा इतना कहकर गहरी नींद में सो जाता है। आधी रात को बूढ़िया उठ जाती है। उठकर पहले जमीन साफ करती है। रस्सी व डंडे को सफाई वाली जमीन पर रखती है। दीया जलाती है। उसके बाद *दुड़. वेरका दम थागपा* कहती है। इतना कहने पर रस्सी अपने आप उस बूढ़िया के पूरे शरीर को बांध देती है। डंडा अपने आप ही बूढिया पर पड़ने लगता है। यानि उस बूढिया को मार मार कर बुरा हाल कर देता है। बूढिया गहरी नींद में सोए हुए बूढे को आवाज़ देती है। बुजुर्ग जी उठिए रस्सी व डंडे ने मेरा दम देकर रखा है। सोया हुआ बूढा उठ जाता है और उस बूढिया को बचाता है। बूढिया कहती है कि यहां पर मेरे पास आपका सामान बहुत है। आप जब भी आएं और जो भी आपने सामान लाया था वो मैने छुपा कर रखा है। उसके बदले में आपको हमेशा नकली सामान देती रही। आपने अपना सामान यहां से ले जाना और अभी ही चलते बनो। बुजुर्ग सारे सामान को रस्सी में लपेटता है और घर की ओर चलता है। घर पहुंचने से पहले बूढ़ा अपनी बूढ़िया को जोर जोर से आवाज देता है। बूढिया अंदर सफाई नहीं करती है और मायुस होकर दूसरे कमरे में चली जाती है। और कहती है कि बूढा हमेशा झूठ ही बोलता है। बूढा आंगन में पहुंच जाता है और सामान को रखकर पहले बूढिया को मनाने के लिए दूसरे कमरे में जाता है। अंतिम क्षण में बूढिया मान जाती है। दोनों सफाई करते हैं दीया जलाते हैं और डंडे से हर चीज़ पर आराम से मारता है। तरह तरह के पकवान, तरह तरह के कपड़े एवं आभूषण निकलते हैं। बूढ़िया खुश हो जाती है। दोनों अमीर बन जाते है।

स्तोदपा भाषा में नए शब्दों के निर्माण की एक प्रकिया

. तोबदन

स्तोदपा भाषा भाषा बहुत ही छोटे समाज की भाषा है, अधिक से अधिक, लगभग 2500 –3000 जनजातिय वक्ताओं की । स्पष्टतः यह अन्यन्त अविकसित भाषा भाषा है। यद्यपि दूसरी धार्मिक भाषा भी है, जिसमें लिखित साहित्य है। परन्तु बोलचाल की भाषा पर उनका प्रभाव बहुत कम है इसका एक कारण यह हो सकता है कि इस समाज में लिखने की परम्परा बहुत कम है।

इस भाषा में मूल भाषा की संरचना से निम्न षब्द भण्डार दृष्टिगोचर होता है। लिखित भाषा भाषा से उनका सम्बन्ध दूर का ही लगता है। उन षब्दों के निर्माण में प्रचलित किसी विधि का प्रयोग नहीं हुआ है। वैसे यह आवष्यक है कि इनके विकास की समाज के छोटे –छोटे अंष का योगदान रहा है, प्रतीत होता है।

इन षब्दों के निर्माण की प्रकिया इस प्रकार है। प्रथम कोई षब्द किसी वक्ता के चुनाव में आ जाता है, जो प्रायः अर्थहीन होता है । वैसे यह किसी से सम्बन्धित होता है अथवा किसी का कोई गुण। कभी –कभी ऐसे षब्द अर्थवान भी हो सकते हैं उदाहरण के लिए हम एक षब्द को चुनते हैं। चोल –चोल में फिर इस षब्द को दोहरा दिया जाता है। यह एक निरर्थक षब्द '' चोल '' से बना है। इनका अर्थ है छोटे – छोटे पैसे , अथवा टूटे हुए खुले पैसे । यही षब्द एक और प्रक्रिया से गुजर कर एक नए प्रकार के षब्द बनाता है। जैसे ' च–ल चो–ले' इसका अर्थ और प्रयोग पूर्व के षब्द के बहुत समान हैं व्याकरण की दृष्टि से यह षब्द संज्ञा का स्थान लेता है और कभी –कभी विषेषण का।

इन षब्दों की एक विषेषता यह है कि इनका अर्थ स्वतंन्त्र रूप से समझने में थोड़ी कठिनाई होती है। इनका अर्थ अपने विषेष संदर्भ में उभर कर आता है। अतः एक ही अर्थ के लिए ऐसे दो –दो , तीन –तीन षब्दों का निर्माण हुआ है। ऐसे षब्दों की मात्रा इन भाषा में काफी है। ऐसे लगभग तीन सौ से अधिक षब्द है। नीचे हम कुछ ऐसे षब्द दे रहे हैं जो क अक्षर से आरम्भ होते हैं । इन षब्दों का निर्माण भोटी भाषा भाषा के नियमों के अधीन नहीं हुआ है , अतः उन्हें हम ध्वनि के आधार पर लिख सकते हैं।

1	कब –कब	छज्जे से ढका हुआ स्थान।
	किर –किर	गोलाकार
	कुग –कुग	मुड़ा हुआ
	कुर –कुर	गुफा जैसी जगह
	कोंग –कोंग	झुका हुआ
	कोर –कोर	छोटा सा गोल
	कोब –कोब	ओंधा
	क्यांग –क्यांग	पतला लम्बा
	क्येर –क्येर	तिरछी चढ़ाई
	क्योग –क्योग	छोटा सा
	कोग–कोग	झुका हुआ
2	कड.–ड. कोड. –डे.	छोटे–छोटे, कुछ मुड़ी हुई।
	क –ब को – बे	छोटी छोटी गुफा जैसी जगह।
	क –र को–रे	कटोरे जैसे।
	क्य– ग क्यो –गे	छोटे छोटे ।
	क्य–र क्यी –रे	छोटे छोटे गोल।
	क–ग को–गो	छोटे छोटे।
	क–र कु –रे	छोटे छोटे गोल।
	क्यांड. – ड. क्योंड.–डें.	छोटे छोटे।

गुरू महर्षि जमदग्नि की जीवनी व कहानी

—गौतम सिंह राणा

जय गुरू जमदग्नि ऋषि महाराज की जय
गुरू रे ब्रम्हा गुरू रे विष्णु गुरूरे देवो महेशवरा
गुरू रे साक्षात परम ब्रम्हा तस्मै श्री गुरूवे नमः

यह एक प्राचीन इतिहास है कि गुरू जमदग्नि पिता महर्षि रिचीक के व माता सत्या की कोख से उत्पन्न हुआ और यह माता व पिता गुरू के बहुत ही भक्त हुए। इन्होंने कई हजार बर्षों तक विष्णु व ब्रम्हा की तपस्या की और कई हज़ार वर्षों तक महा गायत्री व ब्रम्हा गायत्री की। फिर भी इन्हें कोई शान्ति प्राप्त नहीं हुई। इसके बाद यह पृथ्वी की परिक्रमा के लिए चल पड़े और साथ में भक्ति भाव व सरल स्वभाव से प्रभु की सेवा करते, ऋषियों की संगत करते करते यह महाचीन पहुंचे और वहां से तिब्बत के रास्ते सिन्दू घाटी में नमक की खान के आस पास रहने लगे और वहां पर महाचीन में वे शाकीया मुनि के नाम से जाने जाते थे। एक दिन नमक की खान पर चार भाई नमक के लिए वहां पर आ गए और नमक निकाल कर उन्होंने अपने अपने बोझे बना लिए और महर्षि जमदग्नि ने भी अपने को एक सिन्दू नमक के ढेले के समान बना लिया। वे एक के बोझे में घुस गए और जिसके बोझे में घुसते गए तो उसका बोझा बहुत भारी होता था। तो उन्होंने लादाख में भी कई स्थानों पर अपना प्रभाव गौतम बुद्ध भगवान के मंदिर व गोम्पों में भी जोड़ दिया है।

जब वे चारों भाई अपने गांव व घर हंसा में पहुंचे तो उन्होंने रात को एक चमत्कार पहाड़ों पर गुरू जमदग्नि का देखा। उन्होने देखा कि पहाड़ी पर एक चमकती हुई रोशनी दिखाई दी और जब सुबह देखा कि एक घोड़े पर सवार शाकिया मुनि की मूर्ति को देखा तो वे भी शाकिया मुनि के नाम से मानने लगे और एक सप्ताह के बाद वे चारों भाई नमक को बेचने के लिए घर से चल पड़े और वह पत्थर के रूप में गुरू जमदग्नि बारी बारी उनके बोझे में घुसते ही गए और उन्होंने कुंजम जोत पर आराम करने के बहाने देखा कि हमारा बोझा भारी क्यों हो रहा है। जब खोलकर देखा कि उसमें एक नमक की शक्ल का पत्थर है। उन्होंने उसे उठाकर फैंक दिया और वह पत्थर का टुकड़ा फिर उनके बोझे में आ घुसा। फिर भी उनको अपना बोझा पहले की तरह ही भारी लगने लगा। फिर उन्होंने हामटा जोत के शिखर पर भी फिर से अपना बोझा निकाल कर देखा। वह पत्थर का टुकड़ा फिर भी उनके बोझे में ही पाया गया। उन्होंने उस पत्थर के टुकड़े को कई बार पीछे भी फैंकते रहे। मगर वह पत्थर का टुकड़ा उनके बोझे में ही पाया जाता था। जब उस पत्थर के टुकड़े को हामटा जोत पर फैंका था तो उन्होंने एक नया ही चमत्कार देखने को मिला। वह पत्थर का टुकड़ा फिर से उपर की ओर लुढ़कते हुए आ रहा है। जब वह पत्थर का टुकड़ा उनके पास पहुंच गया तो सबसे बड़े वाले भाई को रोमांच हो आया और बोला कि अब मैं यहां पर छुप जाता हूं और यहां पर चारों भाई रात्री का विश्राम करेंगे व डेरा लगाएंगे, मैं उस स्थान पर प्रकट हो जाउंगा। जब उसका रोमांच शांत हुआ तो वे आपस में बड़ी हैरानी व एक अनोखी घटना को देखकर आपस में बातें करते हुए व रास्ते का सफर करते करते वे चारों भाई हामटा नगौणी में पहुंच कर अपना डेरा जमा लिए और रात को आराम से सो गए और सुबह उनको ब्रम्ह मुहूर्त में स्वपन में बताया कि मैं उसी पत्थर के रूप में प्रकट हुआ हूं और मेरी स्थापना उस जगह करना जहां पर कपिला गाय के थन से अपने आप दूध की धाराएं बह रही हों । उन दूध की धाराओं के बीच में व उनके नीचे इस पत्थर के टुकड़े व मुझको स्थापित कर दें। और जब उनकी नींद खुल गई तो देखा कि जैसे उन्हें स्वपन में बताया गया था वैसा ही उनको देखने को भी मिला और उनको जैसा कहा गया था तो उन्होंने भी वैसा ही काम किया। और वह स्थान आज तक हामटा नगौणी में ही मौजूद है। फिर वहीं पर बड़े आराम के साथ रहने लगे। वहां से व्यापार के लिए नगर रूमसू होकर मलाणा गए। वहीं से मणिकर्ण के आस पास ही व्यापार करते रहे कि देव वश से उन के पास राशन बिलकुल ही खत्म हो चुका था। सिर्फ उनके पास भुना हुआ सिउल मुट्ठी भर बचा हुआ था और सबसे छोटे भाई ने शरारत की कि उस भुने हुए सिउल को सारे मलाणा में बीज की तरह फैंक दिया। फिर सुबह क्या देखा कि सारे मलाणा में सिउल पक चुकी थी। फिर उन्होंने वहीं पर रहने का फैसला कर लिया कि दो भाई मलाणा में रहेंगे तो दो भाई हामटा में रहेंगे। तो इस प्रकार ही (कहते हैं कि

जेठा हामटा कोनहा मलाणा) महाराज गुरू जमदग्नि ने वहां पर वाणा को हराया था। तो वहां का नाम मलाणा पड़ा। वहां से मणिकर्ण में चुरासी सिद्ध व असूर को मार कर रेणुका के साथ विवाह हुआ था और इसके बाद महाराज गुरू जमदग्नि माता रेणुका के साथ बारह जगह में स्थापित हो चुके हैं। मलाणा के बाद पहला देउगरा सिद्ध पूर शांगचर दूसरा सोईल व बुरूआ इसी तरह तेरहवीं जगह कुलंग में स्थापित हुआ है। (देऊआ जैम्बलू रा घौर हामटा) गुरू महाराज देऊ जैम्बलू, महाराजा रा महाराज बादशाह रा बादशाह) देऊआ जैम्बलू री जाच नौऊमी पौधरी प्रीणी न फागली हामटे धारा हैरणु आलै यात्रू वै लागासा देऊआ जैम्बलू रा करडू बडा प्यारा। और वाणा की जगह मलाणा कह डाला इस प्रकार इस स्थान का नाम मलाणा पड़ा।

असूर नामक राक्षस को मार कर विजय प्राप्त की। मरते समय वाणा असुर की वाणी से यह शब्द ऋषि जी के लिए प्रार्थना स्वरूप निकले कि यहां पर मेरी भाषा को मान्यता दी जाए और गांव का नाम मेरे नाम के आधार पर रखा जाए।

जय महर्षि गुरू जमदग्नी महाराज की जय।

मलाणा और नग्गर –एक सांस्कृतिक संबंध

– शेरू बाबा

प्राचीन काल से ही मलाणा जनपद और ऐतिहासिक घरोहर नग्गर गांव का आपस में गहरा सम्बंध रहा है। यद्यपि आज हम सभी 21वीं0 सदी की तेज रफतार भरी जिन्दगी की दौड़ में शामिल हो चुके है फिर भी कुलूत देश के इन दोनों गांव के बीच आपसी रिश्ता ज्यों का त्यों बना हुआ है। आज भी ये दोनों गांव आपस में हजारों वर्ष पुरानी धार्मिक मान्यताओं एवं परम्पराओं का निर्वाह उसी तरह करते आ रहे हैं जैसे प्राचीन समय से इनके पूर्वज निभाते रहें हैं।

गौरतलब है कि मलाणा जनपद के अधिपति देवता जमलू का एक मात्र राज रहा है। देवता जमलू के आदेश के बिना मलाणा गांव में एक पत्ता भी नहीं सरकता है। इस गांव के हर एक कार्य में देवता जमलू की आज्ञा या आदेश लिया जाता है। तभी इस जनपद के शुभ कार्य आरम्भ होते हैं। कुल्लू जिले के सबसे भीतरी क्षेत्र के इस गांव का सम्बंध अधिकतर नग्गर घाटी तथा मनीकर्ण घाटी से रहा हैं । इन्हीं दोनों घाटियों से होकर यहां के जनवासी कुल्लू जिले के अन्य हिस्सों में पहुंचते हैं। पैदल रास्ता होने के कारण रात का पड़ाव इन दोनों गावों में इन लोगों का रहा हैं इसलिए जाहिर सी बात है कि मलाणा वासियों के सम्बंध नग्गर से बने हो और अनादि काल से चले आ रहे आपसी सम्बंध गहरे होते गए। गौर रहे कि कुल्लू का समाज देव समाज है। यहां पर 365 देवी देवताओ का वास होता हैं जिसे पौराणिक काल में 18 करोड़ देवी देवताओं का क्षेत्र कहा है। कुल्लू घाटी के समस्त देवी देवता इन प्रतिनिधियों के साथ मिलकर जनमानस के साथ रचे बसे हैं। प्रत्येक घर का अपना देवता होने के साथ–साथ हर ग्राम के अपने–अपने देवी देवता होते हैं। ये देवी देवता हर वर्ष कुल्लू घाटी के समस्त स्थलों में जाकर एक दूसरे के मेहमान के तौर पर जाते हैं। इन देवी देवताओं के साथ हर घर से एक व्यक्ति प्रतिनिधि के तौर पर देवते के साथ जाता है। तो ऐसे में लोगों का आपसी रिश्ता गहरा होता गया।

दूसरी तरफ मलाणा जनपद के अधिपति देवता जमलू के कुल्लू में बारह देउगरे हैं। अर्थात 12 स्थानों में जमलू देवता के स्थान और इन स्थानों पर जमलू देवता के मंन्दिर भी हैं। जिनमें प्रमुख रूप से नग्गर के शरन, रूमसू, हलाण, चेचोगी, और जाणा गांव हैं। जहां से हर साल मलाणा के जमलू देवता की चाकरी करने के लिए साल में दो बार तो लोग जाते ही हैं परन्तु इसके अलावा अगर देवता का बुलावा या आकस्मिक प्राकृतिक आपदा या अनहोनी घटना अगर घट जाए या आंधी तूफान हो देवता जमलू के दरवार पर हाजरी लगती ही है। इन गांवों से हर साल अगस्त माह और फरवरी महीने में मलाणा में लोग चाकरी के लिए पहुंचते हैं। 15 अगस्त को शाउणी जाच में लोग अपने साथ जमलू देवता को चढ़ाने के लिए चांदी के घोड़े ले जाते है और देवता के मन्दिर में चढ़ाते हैं। वहीं सर्दियो के फरवरी महीने में फागड़ी त्योहार के लिए लोग पहुंचते हैं। जिसमें राक्षस के मुखौटों का नृत्य खास आकर्षण का केन्द्र रहता है। इसी तरह हर साल कुल्लू जिले के बाहर देउगरे में मलाणा के लगभग 40–50 लोग जमलू देवता के नाम पर अनाज इकट्ठा करने आते है। जिसे स्थानीय भाषा में नाज गरांदे आते हैं कहते हैं। वहीं हर वर्ष नग्गर की शाड़ी जाच उत्सव में भाग लेने के लिए मलाणी अर्थात मलाणा गांव के लोग इस मेले में पहुचते हैं और इनका नृत्य इस मेले में आकर्षण का केन्द्र रहता हैं। जिसे यहां के लोग मलाणी कह कर सम्बोधित करते हैं। दूसरी तरफ नग्गर गांव की माता बाला त्रिपूरा सून्दरी का जब भी बड़ा फेरा लगता है तो नग्गर से जरी, मनिकर्ण होते हुए, मलाणा पंहुचती हैं तो उस समय मलाणा जनपद के सभी लोग नग्गर से पहुंचे वाला त्रिपुरा सुंदरी माता के साथ आए हुए लोगों को ठहरने तथा खाने पीने की व्यवस्था करते हैं।

आज भी अगर नग्गर गांव के आस पास के लोग मलाणा जाते हैं तो मलाणा के लोग नग्गर गांव का जरूर जिक करते हैं और नाती अर्थात रिश्तेदार कह कर संबोधन करते हैं।

यद्यपि नग्गर गांव के और मलाणा गांव की आपसी भाषा मिलती नहीं है फिर भी मलाणा के लोग कुल्लुवी बोली में नग्गर के लोगों से बात करते हैं। वहीं नग्गर के लोग इतना गहरा रिश्ता होने के बाद भी मलाणा की बोली नहीं बोल पाते। जो आश्चर्य का विषय है। भाषाविद्ध भी अभी तक मलाणा की बोली कणाशी का सही सही अनुमान नहीं लगा सके है। इस बोली में तिब्बती, किन्नौरी, लाहुली बोलियों के अनेकों शब्द समाहित हैं। वहीं कुल्लूवी बोली के भी कुछ कुछ शब्द मिलते है। जमाने ने समय के साथ करवट ली वहीं कुल्लू घाटी भी जमाने की रफतार के साथ निकल पड़ी है। इधर अभी भी कुल्लू के तराई इलाके का यह गांव संकोच के साथ धीरे धीरे बढ़ रहा है। नग्गर और मलाणा गांव का आपसी संबंध अभी भी देवी और देवता की अपार श्रद्धा के साथ साथ कंप्यूटर युग में भी अपनी देव आस्था पर टिक कर एक दूसरे के सहयोग के लिए हमेशा तैयार है।

मलाणा के देवता जमलू का स्थल – देऊ डोभी

–विद्या शर्मा

कुल्लू शहर के सामने पूर्व दिशा में खराहल फाटी, कुल्लू के दर्पण के रूप में दृष्टि गोचर होती है। इस फाटी में डोभी नाम से प्रचलित तीन गांव हैं। पहला पुरोहिते री डोभी अर्थात पुरोहितों की डोभी जिसे डोभी चौकी भी कहा जाता है, दूसरी देऊ री डोभी अर्थात देवताओं की डोभी, तीसरी डोभी जहां अंगू का पेड़ था, वह अंगू डोभी नाम से प्रचलित है। यह तीनों डोभियां बिजली महादेव बस योग्य सड़क से लगभग 50–100 गज सड़क से नीचे है। पुरोहिते री डोभी में राजपुरोहितों के परिवार रहते हैं जो राजा के साथ कुल्लू आए थे, जिन्हें जागीरें मिली थी। दूसरी देऊ री डोभी देवता जमलू मलाणा का गांव है जिसमें तीन वर्ग के परिवारों को देवता की ज़मीन मिली थी, एक ठाकुर परिवार है, दूसरे नाथ सम्प्रदाय के लोग हैं, तीसरे देवता के पुजारी तथा बोटी हैं। मुजारा अधिनियम के पश्चात देवता की सारी ज़मीन इनके नाम लग गई। देवता के पास केवल एक खुली सौह प्रांगण रह गया। इस सौह में मलाणा जमलू का छोटा सा थळा स्थान के रूप में है। लगभग आधा बीघा इस सौह में मलाणा के लोगों के लिए एक छोटी सी सराय बाद में बनाई गई है। इससे पहले मलाणा वासी सौह से कुछ ऊपर बने मढार में आकर रहते थे। इसी मढार में देवता के दो धड़छ रखे गए थे। कुछ वर्ष पूर्व यह मढार गिर गया था। फलस्वरूप यहां देवता के कारकरिंदों में से चमन लाल ने देवता का एक छोटा सा नया मंदिर बनाया। इसमें दोनों धड़छ रखे गए। दोनों धड़छों में एक धड़छ बहुत पुराना है जो संभवतः मलाणा का ही होगा तथा दूसरे के बारे में कहा जाता है कि वह किसी राजा द्वारा दिया गया है। पुराने धड़छ को कोई नहीं उठाता। दूसरे को ही दशहरा के दौरान सौह में लाया जाता है। यह भी कहा जाता है कि पुराने धड़छ को केवल राजा 18 करडुओं को धूप देने के लिए प्रयोग करता है। इस देऊ री डोभी की सौह को 18 करडुओं की सौह माना जाता है। अब भी इसमें चमड़े के जूते थळा तक ले जाना वर्जित है। पवित्रता का भी ध्यान रखना पड़ता है। कुल्लू का कोई भी राजा जब भी देऊ डोभी में आता था तो अपने जूते डोडण के पेड़ के पास जो लगभग 500 गज दूर था उतार कर पुले पहन कर ऊपर आता था। इस सौह तक आने का पुराना मार्ग नीचे से पैदल रास्ता ही था जहां से अन्य देवता भी आते थे।

कुल्लू में जगती पूछ (समस्त देवी देवताओं द्वारा उस विशेष स्थान में आकर मानव कल्याण की समस्याओं का समाधान करना एवं मार्ग दर्शन करना) दो ही स्थानों पर दी जाती थी जिसमें एक नग्गर के जगती पौट में तथा दूसरी देऊ री डोभी की इस 18 करडु की सौह में, देवता जमलू के थळे पर रखे पटड़े पर बैठकर जगती पूछ होती थी। जगती पूछ दशहरे के मुहल्ले वाले दिन प्रातः 8 से 9 बजे के मध्य होती थी जिसमें राजा को भी आना पड़ता था। सारे देवी देवताओं की घंटियां तथा धड़छ, गूर, पूजारी तथा अन्य कारकरिन्दों सहित आते थे। राजा जब भी आता था तो दो बकरे मान के रूप में साथ लाता था। इसमें एक बकरा जमलू देवता के लिए तथा दूसरा कुछ ऊपर लक्ष्मी नारायण के लिए जिसे स्थानीय बोली में सुन्नू नारायण कहते हैं। यहां दशहरे के दौरान होने वाली जगती धीरे धीरे बंद हो गई। कहा जाता है कि राजा भगवन्त सिंह तक यह प्रथा प्रचलित रही। बाद में मलाणा देवता का गूर न होने का कारण भी इस प्रथा के बंद होने का सबब माना जाता है। राज परिवार की ओर से हाजरी देने के लिए एक छड़ीदार मुहल्ले वाले दिन यहां आता था।

दशहरे के दौरान देऊ डोभी में खूब चहल पहल रहती है। आज भी इस स्थान में लगभग देवताओं के 100 कारकरिन्दे 7 दिन तक यहां रहते हैं। नग्गर विकास खण्ड के वह देवता जो नछुंग अर्थात सुच्चे माने जाते हैं वह दशहरा मैदान में न बैठकर इसी सौह में बैठते हैं। यह भी मान्यता है कि यह देवता व्यास नदी को पार नहीं करते इस कारण यहां बैठते हैं। उनमें यहां बैठने की परंपरा तब से ही है जब से दशहरा आरम्भ हुआ। मलाणा के जमलू देवता का चिन्ह खण्डा ही मलाणा से लाया जाता है तथा दूसरा धड़छ जो राजा द्वारा दिया गया माना गया है उसे सौह में सात दिन तक ले जाया जाता है। मलाणा से देवता के जो कारकरिन्दे आते हैं उनमें कारदार, पुजारी, सेवादार, बारी तथा बोटी शामिल होते हैं। इस गांव के ठाकर परिवार से पहले यह लकड़ी मांगते थे उसके एवज़ में सात दिन तक इन्हें खाना खिलाते थे परंतु अब यह अपनी व्यवस्था स्वयं ही करते हैं।

देवता जमलू के साथ बैठने वाले अन्य देवताओं में जाणा गांव का जीव नारायण (ज़मीन से पैदा हुआ) है। इस देवता की घंटी तथा धड़छ तो आता ही है परंतु देवता की बडी कढाई जिसे समाहण कहा जाता है भी

लाई जाती है। देवता के साथ आए कारकरिन्दों में कारदार, पुजारी, भण्डारी, गोंठीदार, छोटे पुजारी, कायथ तथा पांच बारी आते हैं। बारी का अर्थ सहायक से है। देवता के साथ इस के हेस्सी (बाजा बजाने वाले) ढोल, ढौंस, भाणा तथा नगाड़े आते हैं।

दशहरा के दौरान यहां बैठने वाले देवताओं में तीसरा सौर–नाग खराहल है। इसके चिन्हों में घंटी तथा धड़छ आते हैं। महिला कारदार, पुजारी, पालसरा, जठेरा, कठियाला, सेवादार तथा बारी इसके साथ आते हैं। वाद्ययंत्रों में ढोल, ढौंस, भाणा तथा नगाड़ा लाए जाते हैं। चौथा देवता शुक्ली नाग तोन्दला है। इस देवता के नाम शुक्ली इस लिए पड़ा कि जब 18 नाग भन्दल (मिटटी का घड़ानुमा विशेष वर्तन) में से फूटे थे तो यह शुक्का अर्थात बिना झुलसे साफ निकल आया था। इस देवता की घंटी तथा धड़छ आता है। इस देवता के साथ बजन्तरी नहीं आते। देवता के साथ कारदार, पुजारी, गूर, पालसरा, कठियाला, जठेरा तथा बारी आते हैं। देऊ री डोभी में बैठने वालों में पांचवां देवता सोयल का आजीमल है। इस देवता की घंटी तथा धड़छ व वाद्ययंत्र आते हैं। जिसमें ढोल, ढौंस, नगारा तथा भाणा हैं। कारकरिन्दों में कारदार, पुजारी, कठियाला तथा कर्मिष्ट आते हैं। छटा देवता कोटाधार जमलू है। इस देवता की घंटी तथा धड़छ आते हैं। देवता के वाद्ययंत्र साथ आते हैं जिनमें दो नगारे, एक ढोल, एक ढौंस एक भाणा शामिल हैं। कारदार, पुजारी, छोटा पुजारी, कठियाला, पजौउली (देवता को उठाने वाले) तथा तीन बारी साथ आते हैं।

देवता जमलू सहित सभी देवता देव नियमों अनुसार यहां पूजा करते हैं। छटे दिन अर्थात मुहल्ले के दिन अपनी हाज़री लगाने रघुनाथ मंदिर में जाते हैं। उल्लेखनीय है कि जो देवता देऊ री डोभी में बैठते हैं उनके रथ नहीं आते अपितु चिन्ह ही आते हैं। देऊ री डोभी में जमलू देवता की पूजा प्रतिदिन नहीं होती अपितु संक्रान्ति को अथवा विशेष त्यौहार को ही पूजा की जाती है। कुछ वर्ष पूर्व श्रावण मास में देवता की खीर का आयोजन सौह में ही किया जाता था जिसमें जिन जिन लोगों के पास देवता की ज़मीन है उसमें उन सब की भागीदारी रहती थी। आसपास के गांव के लोग भी अपनी गऊओं का दूध प्रातः वहां पहुंचाते थे। खीर गुड़ की बनती थी तथा गाय का घी उपर से डाला जाता था। फुल्के तथा एक सब्जी भी परोसी जाती थी। इस सौह म बैठकर खीर खाने का आनन्द बिलकुल अलग होता था।

अब सौह में खीर का आयोजन बंद हो गया है। केवल एक परिवार (ठाकर परिवार) द्वारा खीर का आयोजन उन द्वारा निर्मित नए मंदिर के प्रांगण में होती है, जो सौह से कुछ ऊपर है। जब सौह में खीर होती थी तो पहले 18 करडुओं का हवन किया जाता था अब मंदिर में ही पाठ हवन करते हैं। देवता जमलू की सौह में एक प्रथा अभी भी प्रचलित है वह है भादों मास में देवता के थळे के पास दीपक प्रज्जवलित करने की। सरसों के तेल में शुद्ध रूई से प्रतिदिन सांयं काल को दीपक जलाया जाता है। इसे स्थानीय बोली में चारा बालणा कहा जाता है। चारा संभवतः चिराग का उपनाम शब्द होगा। इसके अतिरिक्त जब कभी किसी के घर में विवाह शादी अथवा शुभ कार्य हो तो वह अपने देवता जिसमें काली व बिजली महादेव हैं के अतिरिक्त यहां के जमदग्नि को भी बकरा भेंट करते हैं। एक प्रथा यह भी पूर्व निर्धारित है कि जो भी चढ़ावा देऊ री डोभी की सौह में देवता के थड़े पर अथवा मंदिर में चढ़ेगा उसे मलाणा भेजा जाता है। चाहे चांदी के घोड़े हों अथवा नगदी इन्हें अलग से रख कर यदि मलाणा न पहुंचाया जाए तो वहां के कारदार के यहां आने पर उसे सौंपा जाता है। प्राचीन काल में नाथों के परिवार ने इन पैसों के लिए एक अलग थैली रखी होती थी।

दशहरा के अतिरिक्त जब भी मलाणा के लोग कुल्लू आते हैं तो देऊ री डोभी में ठहरने का उनका पूरा अधिकार है। सौह में उनके ठहरने हेतु एक छोटी सी सराय बनी है। अतः देऊ री डोभी का यह पवित्र स्थल देवता जमदग्नि का निवास स्थल है जिसे 18 करडु री सौह भी कहा जाता है।

जिला भाषा अधिकारी; सेवानिवृत

मलाणा का जमलू – जमदग्नि नहीं

–सत्य पाल भटनागर

मलाणा के जमलू के बारे में प्रायः यह भ्रांति है कि यह जमदग्नि ऋषि है। यह भ्रांति प्रायः इस कथानक से उत्पन्न होती है। महर्षि जमदग्नि कैलाश तथा मानसरोवर की यात्रा के पश्चात सतलुज के किनारे चलते हुए लौटे। फिर स्पीति नदी के रास्ते होते हुए हामटा जोत पहुंचे। वहां से वह चन्द्रखणी शिखर की ओर मुड़ गए। चन्द्रखणी जोत पर वह एक शिला के सहारे बैठ गए और विश्राम करने लगे। अपनी गट्ठी, जिसमें 18 करडू थे, को एक ओर रख दिया। थकावट के कारण उन्हें नींद आ गई। कुछ समय पश्चात वहां तेज़ हवा चलने लगी जो गठड़ी को ले उड़ी। हवा के वेग से गठड़ी खुल गई और टोकरी के देवता बिखर गए। वे जहां गिरे, वहीं स्थापित हो गए। महर्षि ने शिला की ओट ले ली और अपना बचाव किया। वायु का वेग थमने पर वह चन्द्रखणी की पूर्वी ढलानों की ओर मुड़ गए। नीचे उतरने पर उन्हें एक रमणीय घाटी दिखाई दी। महर्षि को तप के लिए यह स्थान अति उपयुक्त लगा। यह घाटी मलाणा थी जहां एक बस्ती भी थी। अभी वह अपने लिए स्थान देख ही रहे थे कि इनका सामना वाणासुर से हो गया जो उस क्षेत्र का स्वामी था। वाणासुर ऋषि को देखते ही क्रोधित हो उठा और पकड़ कर पानी से भरे वर्तन में डुबोकर ढक्कन लगा दिया और उसे उबालने के लिए चुल्हे पर चढ़ा दिया। पानी उबलने पर उसने ढक्कन खोला और यह देखकर डर गया कि ऋषि वैसे ही ध्यान मग्न बैठे हैं और उबलते पानी से उनका बाल भी बांका नहीं हुआ। ऋषि ने उसे स्थान को छोड़ने के लिए कहा? जिसे उसने इस शर्त पर माना कि उसके जाने के पश्चात भी वहां उसकी भाषा प्रचलित रखी जाएगी। जिसे ऋषि ने स्वीकार किया। वह वहां से चला गया परन्तु आज भी वही भाषा वहां बोली जाती है। मलाणा की प्रजा तन्त्र पद्धति जमदग्नि ऋषि ने दी क्योंकि उन्हें राजा बनने या अन्य किसी प्रकार का मोह न था। ऋषि जमदग्नि समस्त देवताओं का संस्थापक था इस लिए कुल्लू के देवाधिदेव रघुनाथ जी के आगे नहीं झुकता। इसी लिए जमलू किसी की सत्ता भी अपने उपर स्वीकार नहीं करता। जिसके प्रमाण के लिए अकबर का कथानक दिया जाता है।

जमलू के भण्डार से सम्राट अकबर द्वारा कर के रूप में दो मुद्राएं लिए जाने से देव प्रकोप के कारण कुल्लू में रोग फैल गया। राजा ने अकबर से रोग मुक्ति के लिए वह मुद्राएं लौटाने के लिए प्रार्थना की। राज कोष में दोनों मुद्राएं जुड़ी अवस्था में ढूंढ निकाली गई। मुद्रा वापसी के साथ सम्राट ने देवता सन्मुख अपनी प्रतीकात्मक उपस्थिति जताने के लिए अपनी सोने की मूर्ति और चांदी का हाथी, घोड़ा, हिरण आदि भी भेजे। फाल्गुण में मनाए जाने वाले मेले में ये सभी वस्तुएं प्रदर्शित की जाती हैं। गांव के थोड़ा उपर वृक्षों के झुण्ड के पास भेंट स्वीकार करने की घटना अब भी दोहराई जाती है। कुछ विद्वानों ने इस घटना को अन्य रूप में प्रस्तुत किया है। किसी साधु को मंदिर से दो पैसे दिए गए जो दिल्ली में अकबर के सिपाहियों द्वारा चुंगी के रूप में ले लिए। इस के लिए देवता ने कुपित होकर सम्राट को दण्डित किया। सम्राट को कुष्ठ रोग हो गया। नजूमियों ने कारण बताया। सम्राट ने क्षमा याचना के लिए अपनी मूरत, हाथी, घोड़ा, हिरण और वही दो पैसे भेजे जो जुड़े हुए कोष से ढूंढ निकाले गए। इस आधार पर जमदग्नि को ही कई विद्वान जमलू मानते हैं। कुल्लू के लोग जमलू को भोट देवता भी कहते हैं।

जमलू इन्द्र भी नहीं है। कुछ विद्वानों ने जमलू को इन्द्र माना है उनके अनुसार सृष्टि का आरम्भ त्रिविष्टप (तिब्बत) से हुआ। दानवों के राजा बली ने विश्वजीत यज्ञ के पश्चात इन्द्र और अन्य देवताओं को परास्त किया। अतः इन्द्र 17 अन्य देवताओं के साथ विपाशा की उपत्यका में भाग कर आया और यहां छिप गया और ये देवता उसी स्थान पर स्थापित हो गए। इन्द्र मलाणा में छिपा। कालान्तर में इन्द्र ही जमलू कहलाया। इन्द्र देवताओं का राजा था। इस लिए बड़ा देव कहलाया। श्रीमान यंग भी लिखते हैं कि तभी जमलू अन्य देवताओं को भी दण्डित करता है और अपने और किसी अन्य की सत्ता नहीं मानता। अधिकतर विद्वान इस मत को नहीं मानते हैं कि इन्द्र ही जमलू है।

यमलू से जमलू भी नहीं। भाषा विभाग की द्विमासिक पत्रिका विपाशा के 88वें अंक में श्री मौलू राम ठाकुर का एक लेख हिमाचल में देव परंपरा छपा। इसमें जमलू शब्द यमलू का बिगड़ा रूप बताया गया। उनके अनुसार यमलू यम नगरी में होते थे, जिन्होंने यम की अनुपस्थिति में नचिकेता को सशरीर प्रवेश दे दिया। नियम भंग करने पर यम ने उन्हें निकाल दिया। वे धरती पर आकर पहले आतंक मचाते रहे परंतु बाद में जमलू कहलाए। परंतु ठाकुर साहिब यह स्पष्ट न कर पाए कि कितने यमलू धरती पर भेजे गए। वे क्यों पहले आतंक

मचाते रहे और फिर कैसे देवता स्थापित हुए। क्या कोई श्रेष्ठ यमलू जमलू बना या सभी यमलू जमलू बन गए। जमलू घाटी में सब से अधिक पूज्य देवता हैं जिसके तीस से अधिक स्थान कुल्लू में हैं।

परंतु मलाणा में स्थान जमलू का माना जाता है। जमदग्नि का नहीं। स्थानीय लोग ऋषि जमदग्नि के बारे कुछ नहीं जानते। किसी ऋषि के मंदिर में बलि नहीं दी जाती परंतु जमलू के मंदिर में बलि दी जाती है। विद्वानों ने मलाणा में बोले जाने वाली भाषा की पहचान कणासी के रूप में की है। प्रश्न उठता है क्या वाणासुर की भाषा कथनानुसार कणासी थी। इस कथानक को प्रभावी बनाने के लिए चमत्कार का सहारा लिया गया है। पानी के साथ उबालने पर भी ऋषि समाधिस्थ रहे। यह कहां तक संभव हो सकता है। दोनों कथानकों में सम्मिश्रण हुआ प्रतीत होता है। 1911 ई0 में डब्लयू एम यंग आईसीएस ने जमलू के बारे में लिखा है कि यह कुल्लू का ही कोई मूल देवता है जिसकी पत्नी नरोई थी। मलाणा का मंदिर नरोई का है। लाहुल का देवता घेपण जमलू का बड़ा भाई है और जगथम (वरशैणी) जिसे वह जगदम्ब मानता है छोटा भाई है। परीणी की देवी छोटी बहिन है जबकि जमदग्नि की पत्नी रेणुका थी। श्रीमान यंग ने 12 फागुन का मेला और उसमें की जाने वाली धार्मिक प्रकिया को स्वयं देखा था। गहराई से छानबीन करने पर ही उसने अपना मत व्यक्त किया था। कुछ विद्वानों ने 18 करडुओं को कुल्लू के 18 प्रमुख देवता मानते हुए सूचीबद्ध किया। जो यूं है।

1 जमलू — मलाणा
2 सिंहमल — गाहर
3 गिरमल — बनोगी (काईस)
4 अम्ब खरोल — चचोगी
5 अजिमल — सोईल
6 हारसु नारायण — हलाण
7 मनु — मनाली
8 शमशरी महादेव — शमशर (बाहरी सिराज)
9 त्रियुगी नारायण — दियार
10 जगथम — वरशैणी
11 थिरमल — धारा
12 जीव नारायण — जाणा
13 शुभ नारायण — रूमसु
14 शांडिल — शालीण
15 गौतम — गौशाल
16 सकीरणी — बंजार
17 भागासिद्धा — पीणी
18 कसोल नारायण — कसोल

यद्यपि अठाराह का अर्थ समस्त देवता है परंतु इस सूची में जमलू का भी नाम है जिसे वे चचोगी के देवता अमल की फागली में तिम्बर पिशाचिका द्वारा वर्णित नामों के आधार पर बनाई बताते हैं। यदि जमलू भी दोनों ऋषि जमदग्नि द्वारा स्थापित देवता है तो जमलू और ऋषि जमदग्नि दोनों भिन्न देवता हैं।

श्री लाल दास पंकज द्वारा भृगु तुंग में छपे एक लेख में जमलू, जमलुंग तथा जमदग्नि को एक ही देवता बताया है। परंतु इस धारणा के बारे में वह कोई प्रमाण न दे सके। उनके अनुसार ऋषि जमदग्नि 12 वर्ष की आयु में तप करने उतराखण्ड गये। वह 12 वर्ष तप कर महाचीन चले गये। जहां जमलुंग कहलाए। महाचीन से मानसरोबर होते हुए हंसा (स्पीति) पहुंचे। यहां जमलू कहलाये।

यह गाथा प्रभावी बनाने के लिए जमलुंग तथा जमदग्नि से जोड़ी गई है। स्पीति के लोग जमलुंग देवता से भली प्रकार परिचित हैं। परंतु यह बात सत्य है कि हंसा में जमलू का मंदिर है। यह एक टिब्बे पर स्थित है। मंदिर जीर्ण अवस्था में है जहां पुजारी हर शाम दीपक की रोशनी करता है। वहां के लोग तथा पुजारी बताते हैं कि मलाणा का जमलू यहीं से गया है जिसका कथानक इस प्रकार है। हंसा में कुल्लू हाम्टा के दो व्यापारी डोडू तपानी तथा भानु चलानी जमलू से मिले। उनके साथ देवता हाम्टा गया। वहां से नगौणी होते हुए सुख सौह पहुंचे। जहां 18 करडू उनसे मिलने आये। जमलू ने उनका पूजन किया। फिर सुखू और खुखू जो डोडू तपानी तथा भानु चलानी के वंशज थे के साथ चन्द्रखनी होते हुए मलाणा आए और स्थापित हुए। जमलू कुल्लू घाटी का सबसे अधिक पूजित देवता है। जिसके 30 से अधिक स्थान हैं। सभी स्थानों में फागली मेला खूब धूमधाम से मनाया जाता है। जमलू को भोट देवता भी कहा जाता है क्योंकि गुर कई बार बात चीत में भोटी की तरह भाषा का प्रयोग करता है। संभवतः यह महाचीन की ओर से आया देवता है जो हंसा हाम्टा चन्द्रखणी होता हुआ मलाणा में स्थापित हुआ।

प्राचार्य, सेवानिवृत

मलाणा – भीषण अग्निकांड के बाद

–हीरा लाल ठाकुर

वर्ष 2008 की मलाणा की फागली फागुण मास के जेठा शुक्र (ज्येष्ठ शुक्रवार) के दिन मनाया गया। यह कौतुहलपूर्ण उत्सव धरोहर गांव मलाणा में हर वर्ष मनाया जाता है। आम तौर पर यह उत्सव सात दिन तक मनाया जाता है। परंतु इस वर्ष मलाणा गांव का आधा भाग आग से नष्ट होने के तुरंत बाद लगातार तीन माह की बर्फबारी के बाद आया। यह उत्सव औपचारिक रूप से बादशाह पूजा के तौर पर ही मनाया गया। परंतु यह लघु उत्सव भी अपने आप में अनूठा है। इस पर्व से पूर्व जमलू के मुख्य धामी (कर्मिष्ट), गुर, पुजारी, कारदार आदि 13 दिन पूर्व ही गुप्त बैठते हैं। इस परंपरा में देवता के मंदिर में ही रहना होता है।

लघु या दीर्घ शंका के तुरंत बाद ठंडे पानी से नहा कर शुद्द होकर ही तप स्थान में प्रवेश करना होता है। यह फागली उत्सव बादशाह की पूजा समाप्ति के बाद देवता व बादशाह के (देव घर) भंडार में जाने के बाद समाप्त होता है। प्रातः ठारा करडु के भंडार से ठारा करडू की पीढ़ी (करड़ी) निकाली जाती है। परंतु इस वर्ष यह परंपरा स्थगित रही।

उत्सव से पांच दिन पूर्व से पांच कन्याएं देव भंडार (रेणुका मंदिर) परिसर में रात दिन रहेंगी। उनकी उचित व्यवस्था गांव प्रबंध द्वारा होती है। वे दोहडू का पारंपरिक पहनावा ओढ़कर वहां वास करेंगी। इस दौरान उन्हें जिस भी व्यंजन की आवश्यकता होगी वह देव प्रबंध कमेटी को सहर्ष तुरंत पूरी करनी होती है। इस वर्ष यह काम भी स्थगित रही। मलाणा के सभी बाकी लोग शाम दोपहर उत्सव समाप्ति तक पूरा उपवास करके पानी भी ग्रहण नहीं करते हैं। इससे पूर्व प्रातः करीब 3 बजे की पारंपरिक सिड्डू आदि भोजन करके उसके बाद दिन भर उपवास होगा, जैसे कि रोजे की भांति। जमलू के 12 देऊघर इस तरह हैं:– कुलंग, बरूआ, मझाच, शंगचर, बड़ाग्रां, देवटी, छन्नीखोड, हामटा, सोयल, जगतसुख, बटाहर, मलाणा, जाणा व बगियान्दा। बगियान्दा में जमलू दो साल पहले आए थे। मढ़ में रहे।

मलाणा के बाहर जमलू के देऊघरों से जो लोग फागली को चाकरी में नहीं पहुंच पाते, उनको वरिष्ठ लोग या स्याने लोग अपने अपने घर पर ही उस दिन उपवास रख कर चाकरी करते हैं । सायं काल चार बजे के बाद ही भोजन ग्रहण कर चाकरी निभाते हैं। इस वर्ष मुख्य देव स्थानों के जलने के कारण सारी प्रक्रिया महामाई रेणुका के भंडार से ही आरंभ हुई।

विशेष जगती नगर, लगघाटी, शालंग, सैंजघाटी, धाउगी, बंजार में पलाईच, हरकंडी में मतेऊड़ा, कणावर में (ऊच) बली के लिए भेडू, पेहरू, एक वर्ष का होता है। इस एक वर्ष तक इस भेडू को पूरे गांव वाले चारा पानी देकर पालते हैं। इस अग्निकांड में जमलू के वाद्ययंत्रों में ठोऊरू, ढोल, जगीर, गूंज, नग जल गए बताए गए हैं। इसके बावजूद बाकी बचे वाद्ययंत्रों से इस उत्सव को पूरा किया गया। देवता के चांदी के रणसिंगे, करनाल, फलोरी आदि पूरा साजो सामान के साथ रेणुका कोठी से यात्रा आरंभ हुई। फलौहरी (रंगबिरंगे ध्वजाए) सजी थी। देवता के कर्मिष्ठ व वारी लोग परंपरा को गंभीरता से निभाते हुए सफेद ऊनी कोट, चोला चाकरी की सफेद टोपी पहने जमलू की लघूमर्ति व बादशाह अकबर की मूर्ति ला रहे थे। जहां यह उत्सव मनाया जाता है उस स्थान का नाम फलौहरी है। यहां पर पत्थरों का एक मंदिर जमलू ऋषि का है। देवघर के दो ऊंचे समाधी की तरह खड़े पेड़ आग से झुलसे होने के बावजूद अपने सानिध्य में इस उत्सव को निभाने में गौरव अनुभव करते प्रतीत हो रहे थे।

इनके पीछे खरोडिंग नामक देव विधि संपन्न करने की पवित्र भूमि है। पीछे अखरोट के वृक्ष और ऊंची ऊंची दो टोहलियां (बडे पत्थर) हैं। समीप के पत्थर पर आम लोग देव प्रकिया देख सकते हैं। परंतु खरोडिंग की ओर उस पत्थर से जरा भी बर्फ गिरा तो जुठा यानि अपवित्रता घोषित कर उसे विधान से एक (पेहरू बली) देना होगा। इसलिए सभी लोग सहम कर संभल कर नजारा देख रहे हैं। इस पत्थर के सपीप नीचे बाजे वाले देवधुन बजाते हुए बैठे हैं। देवता की यात्रा खरोडिंग पहुंचे व कर्मिष्ट व वारी लोग आगे आए। वे एक बड़ी मशाल लेकर पहुंचते हैं। उसे तप स्थल के किनारे छोड़कर पीछे हटते झुक कर सलाम करते हैं। फिर पुजारी अकेला ही उस मशाल को उत्तर की ओर कोने में ले जाकर रखता है। तपस्थल को पुजारी ने अभी हटाकर चारों तरफ खाली किया। परंतु बीच में लगभग चार फुट लंबा चौड़ा व अढाई फुट ऊंचा बर्फ का टीला यथावत सिंहासन के तौर पर रख छोडा है। पुजारी बिलकुल नग्न केवल एक लघु धोती लपेटे हुए सारी प्रकिया निभाता है।

दो सहायक पुजारी को सहयोग दे रहे हैं। जमलू महाराजा की यात्रा छोटे छोटे बर्फ से लकदक करती धरती पर आती है। चांदी के छत्र, हाथी, घोड़े, हिरण आदि सामान के साथ गुम्बदनुमा टोकरी जैसी धातु के दो पिटारे, लाए जाते हैं। कर्मिष्ट लोग यह सारा सामान खरोडिंग तपस्थल पर पवित्रता से बर्फ पर रखते हैं। जमलू का धोड़छ (धूपदान) कनिष्ठ पुजारी के हाथ में है।

अब मुख्य पुजारी बर्फ के राज सिंहासन के पास सारा सामान रख कर विशेष पूजा की तैयारी के लिए एक सहायक के साथ पीछे की टोहल (पत्थर) की गुफा (रूआड़) में जाकर अपने सारे वस्त्र उतार कर केवल एक नवीन सफेद शुद्ध कपड़े का अंग वस्त्र पहनकर वापिस आता है। आकर बर्फ से हाथ पांव मलकर पवित्र करके पूजा कार्य आरंभ करता है। वाद्ययंत्र, नरसिंग करनाल बज रहे हैं।

चांदी की लंबी कनीरी को विशेष अंदाज से हल्के हिलोरे से आगे बढ़ कर वैसे ही पीछे या अन्य तरफ हटकर बजाया जाता है। मुख्य पुजारी के लिए अब विधिपूर्वक आसन के उत्तर दिशा में बर्फ पर हाथ से स्थान बनाया गया। पूरे बर्फ के आसन को हलके से हाथ से थोड़ा सुधार कर बर्फ पर घोड़ों, हाथी और मृग को सलीके से सजाया गया। छत्र को अभी नहीं सजाया गया है। अभी लगता है कि कच्ची पूजा की तरह तैयारी है। पुजारी ने एक विशेष प्रकार की ताजा पौध की दो अढाई फुट बारीक छड़ी लेकर पहले धूप फेरा फिर छड़ से धरती पर स्पर्श करते हुए सिंहासन के गिर्द वाद्य यंत्रों की धुन के साथ तीन परिक्रमा झुककर देऊ सेवा मुद्रा में की। उसे शुद्ध कोरा सफेद वस्त्र का साफा हाथ में कोहनी और मुट्ठी में पकड़ कर बर्फ के आसन पर विराजमान जमलू को पहनाया। अब चांदी के छत्र को उसके ऊपर बर्फ पर स्थापित किया गया। हिरण को विशेष श्रृंगार कर सजाया जाता है। छत्र के सिरे पर एक सोने का लघु छत्र भी सजाया गया। मुख्य पुजारी ने एक बार फिर उसके गिर्द झुककर परंपरागत विधि से परिक्रमा की।

एक खास पिटारी से पुजारी बहुत ही लघु प्रतिमाएं निकाल कर बर्फ पर स्थापित कर रहा है। मेरे साथ बैठे वरिष्ठ व्यक्ति से मालूम हुआ कि यह अकबर की पहचान है। पुजारी एक प्रतिमा को संभालकर विधि से निकालकर मूर्तियों के गिर्द बर्फ में रोपकर बिठाकर रखता है तथा हर बार सजदा, सलाम कर रहा है। सहायक पुजारी, कर्मिष्ट भी एक हाथ से सलाम मुद्रा में शीश झुकाते हैं। एक पूजा की प्रकिया है।

साथ में ही रखी जलती मशाल को विशेष स्थान पर रखा जाता है ताकि यह बुझ न जाए। अंत में एक भेडू को लाकर मुख्य पुजारी द्वारा उनको कूंगू का टीका लगाकर देवता के एक पात्र से पानी छिड़क कर पानी डाल दी जाती है, यनि देवता को अर्पण किया जाता है। मेंढा पूरी तरह थर्रा कर कांपने पर माना जाता है कि यह बली महाराज को स्वीकार है।

अब इनकी अगली प्रकिया के लिए पुजारी द्वारा बाकायदा आवाज़ लगाकर सचेत किया जाता है कि यदि किसी को पाप नहीं देखना है तो वे उस स्थल से तुरंत प्रस्थान करें। उसका पाप देखना अथवा दुखी होना भी दोष माना जाता है। अब भेडू को सभी पुजारी पकड़ पकड़ कर बर्फ पर सजे सिंहासन के गिर्द चारों पैर अंदर की ओर मोड़कर पकड़कर पीठ बजा बजा कर परिक्रमा करके उस भेडू का कलेजा निकाल कर दिखाते हैं। उसके बाद फागली प्रक्रिया संपन्न होती है। भेडू को किसी खास वर्ग के लोग ले जाते हैं। उसे किसी अन्य को नहीं खिलाया ज़ाता है। पुजारी सभी मूर्तियों, सामान को पुनः उसी क्रम में बंद करते हैं। और वापसी यात्रा देवता के भंडार के लिए शुरू होती है। कुछ श्रद्धालु भी चाकरी के मंतव्य से जाते हैं। वे निश्चित दिनों के बाद वापिस होते हैं। कुछ खास श्रद्धालु यह उत्सव समाप्त होने के बाद ही घर वापिस आते हैं।

नोट :– मलाणा के बारे में सबसे पहले रासर, जो कि ब्रिटिश विद्वान थे, ने मलाणा में रहकर लिखा है। रासर को मलाणा गांव के बाहर ही रहना पड़ा था क्योंकि उस समय किसी अजनबी का ग्राम में प्रवेश निषेध रहा होगा। उसके बाद कुल्लू के कटराईं गांव के मास्टर प्रकाश जो, सन 42 में मलाणा में कार्यरत थे, ने मलाणा के बारे में वहां की पूरी संस्कृति के बारे में लिखा है।

गांव पाथला,
डाकघर जरी।

मलाणा का जमलू

– मौलू राम ठाकर

कुल्लू ज़िला के मलाणा जनपद में आदिकाल से देवता जमलू का साम्राज्य है। विद्वानों ने इसे लोकतंत्रात्मक गणराज्य का आदर्श माना है। समस्त जनपद दो भागों में विभक्त है सौरा बेढ़ और धारा बेढ़। प्रत्येक बेढ़ में दो दो चुग अर्थात मुख्य वंश हैं – थमयाणी चुग, वगवाणी चुग, पलचाणी चुग और दुराणी (या शिल्टू) चुग। ये चारों चुग पुनः दो दो कुलों में विभक्त हैं जिन्हें 'छुदी' कहते है। इन आठ छुदियों के निवासी निर्धारित समय पर वयस्क मताधिकार के आधार पर अपने में से एक एक पुरूष सदस्य ज्येष्ठांग अर्थात अपर हाउस के लिए चुनते हैं। ये सदस्य जठेरे (ज्येष्ठ) कहलाते है। ज्येष्ठांग के लिए तीन सदस्य अर्थात कर्मिष्ठ (कारदार) पुजारी और गूर (चेला) देवता जमलू स्वयं मनोनीत करता है। ज्येष्ठांग भारत की राज्य सभा या ब्रिटेन के हाउस ऑफ लार्डज की तरह कमजोर नहीं बल्कि अमेरिका के सिनेट की तरह शक्तिशाली है। लोअर हाउस को कनिष्ठांग या कोर कहते हैं इसमें गांव के हर एक परिवार का एक एक वयस्क व्यक्ति सदस्य होता है। जो सदस्य किसी कारण मत नहीं दे सकता उसे डूई कहते हैं। शेष सभी मत देने वाले सदस्य को चाकर कहते हैं। ज्येष्ठांग के लिए नव निर्वाचित सदस्य को पुजारी हाथ से पकड़ कर चबूतरे (ज्येष्ठांग की बैठक) पर ले जाता है। वह देवता तथा जनपद के प्रति बफादारी की शपथ लेता है, जिसके लिए उसी समय काटे बकरे या भेड़ के लहू से माथे पर तिलक लगाया जाता है।

देवता जमलू गांव का सर्वोच्च प्राधिकारी है। उसे लौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार के अधिकार प्राप्त हैं। भारत या अमेरिका के राष्ट्रपति या ब्रिटेन के सम्राट से इसके अधिकार कहीं अधिक हैं। इसके सामने कोई झूठ नहीं बोल सकता, दगा नहीं दे सकता, चोरी नहीं कर सकता। घोर अपराध करने पर देवता मृत्यु का दण्ड भी देता रहा है। ऐसी स्थिति में अपराधी के शरीर में मोटे पत्थर बांधे जाते थे और उसे मलाणा खड के गहरे पानी में धकेल दिया जाता था और वह वहां मछली के लिए शिकार बनता था। अंग्रेजी प्रशासन के दौरान सन 1884 ई० में शुक्रू कर्मिष्ठ को चोरी के दण्ड में देश निकाला का दण्ड दिया गया था और वह शेष सारी उम्र मलाणा वापिस नहीं आया। इसी तरह 1944 ई० में ज्येष्ठ पुजारी को मंदिर से चांदी के आभूषणों की चोरी के दण्ड में निर्वासन का दण्ड दिया गया और उसकी सारी संपत्ति जब्त की गई। वह कुल्लू में आकर एसिस्टेंट कमिश्नर से मिला। हाईकोर्ट ने आदेश दिए कि अंग्रेजी शासन में किसी को इस तरह के दण्ड देने की इजाजत नहीं है और पुलिस के साथ पुजारी को मलाणा वापिस भेजा। लोगों ने कहा कि देवता के निर्णय के अनुसार उस पुजारी के साथ हमारा हुक्का पानी बंद है। हम उसके साथ छू भी नहीं सकते। वह जहां मर्जी वहां रहे। कुल्लू में पहुंच कर उसकी उन्हीं दिनों मृत्यु हो गई थी।

प्रश्न उठता है कि यह देवता कौन है जिसका शासन आदि काल से विशिष्ठ है। सामान्य और आम बोल चाल में इसे जमलू देवता कहते है। इसी नाम से यह नगर, हलाण और मलाणा में भूमि का मालिक रहा है तथा मुजारा अधिनियम लागू होने से पहले इसे 838 रूपये 15 आने की माफी मंजूर थी। ए०एफ०पी० हकोर्ट ने इसे "जैमलू उर्फ जमदग्गन" लिखा है। (द हिमालयन ड्रिस्ट्रिक्ट ऑफ कुल्लू, लाहौल एण्ड स्पिति, 1871, 94)। कुल्लू भर में जमलू नाम से अनेक देवता हैं और प्रत्येक के संबंध में अपने अपने लोक विश्वास हैं। इस तरह पहला विषय तो यही विवादास्पद है कि ये जमलू देवता कौन है। दूसरा यह कि मलाणा का जमलू कौन है?

यह भी विश्वास है कि जमलू देवताओं की एक सामन्तशाही है जिसका एक सोपानात्मक संगठन है। इसका उच्चतम सत्ताधिकारी मलाणा का जमलू है और शेष जमलू देवता उस पर आश्रित अधीनस्थ सामन्त हैं। ऐसा विश्वास इस लिए भी तर्कसंगत है कि मलाणा के जमलू को बड़ा देऊ (महा देवता) भी कहा जाता है। इसी तरह इसे रा–देऊ अर्थात राजा देवता भी कहते हैं। विशेष रूप से छमाण, डेफरी, शांगचर, शेगली, परीणी, नरोग, शियाह, पाशी आदि के जमलू देवता तो मलाणा के जमलू के अधीनस्थ जागीरदार हैं क्योंकि ये सभी मुजारा अधिनियम से पूर्व इसे फसल की उपज का भाग देते रहे हैं।

मलाणा का जमलू कौन है? इस संबंध में मि० जी०एम० यंग ने यह सिद्धान्त प्रस्तुत किया था कि जमलू मूलतः मुगल सेनाध्यक्ष जैमल खां है। (एस०एस० रोज ट्राइवज एण्ड कास्टस ऑफ द पंजाब, 1883, खण्ड 3, च 266)। इस सिद्धान्त के अनुयायियों में से कुछ ने जमलू को मुसलमान पीर कहा है तथा कुछ विद्वान इसे जलालुदीन मुहम्मद अकबर होने का तर्क देते हैं और अपनी स्थापना की पुष्टि में मलाणा जमलू के पास भेड़ बकरी के हलाल की प्रथा का हवाला देते हैं। यदि यह धारणा ठीक है तो उस मूल घटना का क्या होगा जो

यह बताती है कि कोई साधु मलाणा के जमलू के मंदिर से एक टका (दो पैसे) भेंट के रूप में ले गया था जो दिल्ली में अकबर के कर्मचारियों ने चुंगी के रूप में लिये थे और शाही खज़ाने में जमा किए थे। परिणाम स्वरूप अकबर को कुष्ठरोग हुआ और अपने उपचार के रूप में न केवल अपने सोने की मूर्ति जमलू देवता को भेंट की अपितु दण्ड के रूप में सोने और चांदी के घोड़े और हाथी भी प्रस्तुत किए। यदि मलाणा का जमलू मुगल सम्राट जलालुदीन अबकर है तो ये दो पैसे किसके हैं और अकबर ने अपनी और घोड़े तथा हाथी की मूर्तियां किसे भेंट की। जमलू मुगल सेनाध्यक्ष जयमल खां भी नहीं हो सकता क्योंकि उसकी हैसियत नौकर या अधिकारी की थी, देवता की नहीं। जमलू और अकबर दो भिन्न व्यक्तित्व हैं इस तथ्य की पुष्टि प्रति वर्ष 12 फाल्गुन को फागली के अवसर पर सिद्ध हो जाती है। जब अकबर की मूर्ति तथा जमलू की मूर्ति एक साथ आमने सामने पूजी जाती है। इस प्रश्न पर जी0एम0यंग भी निरुतर रहा था कि वास्तव में वह कौन शक्तिशाली प्रतापी देवता था जिसके कारण अकबर को कोढ़ हुआ था और उसे दण्ड देना पड़ा था। मि0 यंग ने मलाणा के लोगों को मुसलमान सिद्ध करने के भी प्रयत्न किए थे परंतु इस चेष्ठा में भी वह सफल नहीं हुआ था। हलाल युक्त बलि ऊझी क्षेत्र के गांव बुरुआ, मझाच, कुलंग के जमलू देवताओं के पास भी दी जाती है, परंतु उनके मानने वाले मुसलमान नहीं हैं। कुल्लू में 'पीर' की पूजा प्रचल्लित नहीं है। कांगड़ा आदि क्षेत्रों में पीर की पूजा हिन्दु और मुसलमान साथ साथ करते रहे है। यूं लगता है कि मलाणा में जमलू के पास पशुओं की बलि आरंभ में नहीं चढ़ाई जाती थी। अकबर के लोगों ने जब अकबर की मूर्ति और दण्ड भेंट किए तो अपनी रीति रिवाज के अनुसार हलाल करके पशु बलि दी जो बाद में परंपरा ही बन गई।

मेरा अपना मत है कि कुल्लू के सभी जमलू देवता जमदग्नि के प्रतिरूप नहीं हैं। यहां अनेक जमलू देवता ऐसे हैं जिनकी धारणा या कोई परंपरा जमदग्नि रूपी जमलूओं से मेल नहीं खाती। मैं ऐसे जमलुओं को नचिकेता के आख्यान से जोड़ता हूं। जब नचिकेता अपने पिता के क्रुद्ध होने के कारण यमलोक पहुंचा तथा यमराज की अनुपस्थिति में तीन रात दिन भूखा प्यासा यमराज की प्रतीक्षा में बैठा रहा तो यमराज ने इस लोक में रात दिन विचरण करने वाले अपने यमदूतों को सजा दी कि उनकी कोताही के कारण एक अपराजित व्यक्ति कैसे यमलोक पहुंचा। दण्ड के रूप में ये यमलोक के प्रतिनिधि यमदूत पृथ्वी पर ही रहे और अपने कार्यों के फलस्वरूप जमलू देवता कहलाए। परंतु मलाणा का जमलू देवता उनमें से नहीं है यह निश्चित है।

कुछ लोगों का मानना है कि मलाणा का जमलू तिब्बत और जनजातीय क्षेत्र लाहुल स्पीति का जम्बलुङ. है। कहीं इसे जंबला भी कहा जाता है। वास्तव में जमलू और जमलुङ. का दूसरा यह तथ्य भाषायी और संस्कृतिक दृष्टि से सिद्ध हो जाता है। संस्कृत या देशज भाषाओं के शब्दों में 'ङ.' अक्षर जोड़ने से भोटी या तिब्बती शब्द बनते हैं यथा – समुद्र से समुद्रङ., संस्कृत स्वर्ग से देशज सौर्य और किन्नौरी सौर्गाङ. तेल से तेलङ. काल से कालङ. आदि। लाहुल स्पीति क्षेत्र में देव प्रथा बहुत देर बाद पहुंची है। इससे पूर्व यह क्षेत्र 'गारजा खङोलिङ.' कहलाता था अर्थात डाकिणियों और भूत प्रेतों का देश। लाहुल की देवगाथा 'लारा' सातवीं आठवीं सदी ई0 की लगती है। जनजातीय क्षेत्र के प्रसिद्ध विद्वान श्री तोबदन पहले लेखक हैं जिन्होंने सोमसी पत्रिका के जुलाई 1979 अंक में देवगाथा लारा प्रकाशित की है। निश्चय ही जमलू का देवरूप कुल्लू में पहले पूजित हुआ और लाहुल स्पीति क्षेत्र में बाद में जमलुङ. के रूप में प्रचलित हुआ।

मिस्टर डब्ल्यु0 एम0 यंग 1868–69 में कुल्लू के एसिस्टेंट कमिश्नर थे वे मार्च 1911 में पुनः मलाणा गए। उन्हें भी देवता जमलू तक उसकी शासन प्रणाली के बारे में जिज्ञासा हुई थी। उन्होंने देवता जमलू के प्रमुख वार्षिक उत्सव 'फागली' को स्वयं देखा और परखा था। उन्होंने अपने भाई जी0एम0यंग की उस धारणा का खण्डन किया जिसमें उसने जमलू को मुगल सेनापति जैमल खां बताया था। मि0 डब्ल्यू एम यंग का Malana and the Akbar Jamlu Legend नाम से एक महत्वपूर्ण लेख "Journal of the Punjab Historical Society Volume IV, No. 2 Page 98-111 में प्रकाशित हुआ है। इसमें वे लिखते हैं कि जमलू नाम जमदग्नि का अपभ्रंश रूप है जो विष्णु पुराण के अनुसार ऋषि है तथा हिमालय में आराम और शांति की तलाश में आया था। उसके साथ उसकी पत्नी रेणुका भी थी जो मलाणा में नरोई के नाम से जानी जाती है।

स्थानीय परंपरा के अनुसार एक बार महर्षि जमदग्नि मानसरोवर की परिक्रमा करके आ रहे थे। जब वे चन्द्रखणी पर्वत शिखर पर पहुंचे तो पर्वत की दूसरी ओर मलाणा के शासक वाणासुर को महर्षि के आगमन का अनुभव हुआ जिसे वह अपना कट्टर शत्रु समझता था। दोनों में पर्वत शिखर पर घोर युद्ध हुआ। महर्षि अपने साथ एक करडू 'पिटारी' में अठारह देवताओं की प्रतिमाएं लाए थे। युद्ध में महर्षि ने वाणासुर को परास्त तो

किया परंतु परास्त होने से पहले ही वाणासुर ने ऐसी भयंकर आंधी से प्रहार किया कि करडू में रखी सारी प्रतिमाएं उड़ कर दूर दूर बिखर गई और जहां जहां पहुंची वे देवता के रूप में प्रादुर्भूत हुई। वे सभी ठारह करडू के नाम से विख्यात हुई।

वही वैदिक महर्षि जमदग्नि है जो मलाणा का सत्ताधारी है और जिसका लोकतंत्रात्मक गणराज्य विश्व भर में प्रसिद्ध है। जहां तक महर्षि के मलाणा तक पहुंचने और राज्य स्थापित करने का संबंध है एक अन्य महत्वपूर्ण और विशिष्ट जनुश्रुति प्रचलित है, जो यहां के कुछ एक रहस्यों से पर्दा उठाने में सहायक सिद्ध होती है। इस समय इसके तीन भिन्न भिन्न प्रलेख उपलब्ध हैं। पहला रूप श्री लाल दास पंकज ने "मलाणा के देवता जमलू के प्रति मेरा मन्तव्य" शीर्षक से भृगु तूंग पत्रिका के अंक 8 वर्ष 4 के पृ॰ 6–9 पर छपा है जो उनके अनुसार सन 1924 में उर्दू भाषा में लिखा हो परंतु लेखक का नाम नहीं है। दूसरा भृगु तूंग अंक 12 पृष्ठ 12–17 पर प्रकाशित हुआ है। यह भी अज्ञात नामा है। तीसरा प्रलेख हमें गुरू गौतम सिंह राणा गांव व डाकघर प्रीणी तहसील मनाली जिला कुल्लू ने उपलब्ध कराया है। यहां तीनों का सार दिया जा रहा है।

"ऋचिक ऋषि और सरस्वती माता के घर जमदग्नि ऋषि ने जन्म लिया। जब वह बारह वर्ष का हुआ तो वह उत्तराखण्ड में तपस्या करने चला गया। बारह वर्ष तक हिमालय में तपस्या करने के बाद वह महाचीन गया जहां के बादशाह के साथ उसकी मित्रता हो गई। बादशाह के मरने पर उसका बेटा राजगद्दी पर बैठा। तभी एक दैत्य ने उस पर आक्रमण किया और बादशाह के हार जाने पर उसने दैत्य को एक महिला, एक गाय, एक बिल्ली, एक कुतिया, एक सूअरी, एक मुर्गी और एक भेड़ खाने को दी जो सभी गर्भवति थीं। यह जानकर जमदग्नि ने चीनी बादशाह को बैल बनने का श्राप देकर स्वयं मानसरोवर के लिए प्रस्थान किया।

मानसरोवर में तपस्या करने के बाद महर्षि स्पिति में आ कर हांसा गांव में ठहरे। कुछ समय के बाद हामटा के दो व्यापारी डोडू तपानी और भानू चलाणी हांसा आए। जमदग्नि साघु के भेष में उनके साथ हामटा आया और उन दोनों ने उसे झूमड़ी में रहने के लिए स्थान दिया। जमदग्नि साघु ने यहां बारह वर्ष तक घोर तपस्या की, यहां तक कि चिड़ियों ने उसकी बगलों मे घोंसले बनाए। लोगों ने भेंट में अन्न–धन दिल खोल कर दिया। यूं लगता है कि यहीं देवता घेपन की जमदग्नि महर्षि से भेट हुई और दोनों धर्म–भाई बने। तब वह लाहुल का देवता नहीं था। वह रोहतांग से इस ओर के क्षेत्र में रहता था। बाद में उसने मुंह में अन्न के दाने डाले तथा ग्युंगडुल और तांगज़र आदि देवताओं को साथ ले कर लाहुल में प्रवेश किया। जब डाकिनियों तथा भूत–प्रेतों ने उसे रोका तो वह नंगा हो गया कि मेरे पास तो कुछ भी नहीं है। इस तरह लाहुल में अन्न पहुंचा और मानव भी। तब वह लाहुल का राजा घेपन कहलाया।

उन दिनों हामटा क्षेत्र में हामटा, शिल्हा, सेरी, शाहणी, बोगी, शौहरी, गारू नाम के सात गांव थे। कुछ समय के बाद डोडू और भानू पुनः स्पिति में व्यापार के लिए गए। पीछे से उक्त सात गांव वालों ने गिरदा और मिरदा नामक अपने दो नेताओं के साथ मिल कर जमदग्नि का सारा सामान तथा लोगों द्वारा भेंट स्वरूप दिया धन लूट लिया। इस पर साधु के श्राप से सातों गांव के लोग चमेड़ी नामक बीमारी से नष्ट हो गए। केवल डोडू और भानू के परिवार ही बच गए। घर वापिस आने पर डोडू और भानू ने साधु रूपी ऋषि की खोज की और उन्हें वह नग्यैणी स्थल पर मिला। उन दोनों के अनुनय विनय के बावजूद ऋषि वापिस झूपड़ी जाने के लिए तैयार नहीं हुआ। ऋषि ने उन्हें एक पत्थर की पिंडी दी और कहा कि "तुम इसकी विधिवत पूजा–अराधना किया करो। यह तुम्हें सुख, शांति और समृद्धि देगी"। तब वह कुछ समय सुखू–सौह में रह कर भगवान की कचहरी में दिल्ली गए। वहां जमदग्नि ऋषि का राजा प्रसेनजित की पुत्री रेणुका से विवाह हो जाता है। उनके पांच पुत्र होते हैं, जिनमें परशुराम सबसे छोटा था। तत्पश्चात गन्धर्वराज चित्ररथ की अपसराओं के साथ जलकीड़ा, परशुराम द्वारा माता रेणुका का वध, सहस्रवाहु अर्जन द्वारा कामधेनु गौ का अपहरण, बदले में परशुराम द्वारा राजा सहस्रवाहु की सेना के सर्वनाश, उसके हज़ार बाजुओं के काटे जाने और अंततः उसके मारे जाने आदि की घटनाओं से दुखी और संत्रस्त हो कर जमदग्नि ने पुनः हिमाचल की ओर प्रस्थान किया तथा परशुराम को भी मानव हत्या के पाप से मुक्ति के लिए इस ओर तीर्थाटन की आज्ञा दी। परशुराम तीर्थ यात्रा के बाद निर्मण्ड में बस गया। जमदग्नि पहले हामटा और फिर चन्द्रखणी की ओर चल पड़े। यहां ठारह करडू की घटना घटी परंतु मलाणा के शासक वाणासुर को महर्षि परास्त नहीं कर सके। वह तभी उनके काबू आया जब स्थानीय देवता जगथंब ने उनकी सहायता की। उन दोनों द्वारा पकड़े जाने पर वाणासुर ने तब हार मानी जब अपनी दो शर्ते जमदग्नि ने स्वीकार की। पहली यह कि उसकी बोली 'कणाशी' बनी रहे, दूसरी यह कि ऋषि की पूजा के साथ उसके खण्डा की भी पूजा होती रहे। जमदग्नि ने जगथंब को अपना धर्म भाई बनाया और आज तक जमदग्नि घेपन और जगथंब भाई भाई के रूप में रह रहे हैं।

डा–ला बनाम देऊ जमलू

– छेरिंग दोरजे

आदिम मानव समाज का एक जीवाश्म रूप है 'मलाणा–निवासी' जो कुल्लू की मनोरम घाटी व्यास और पार्वती नदियों के मध्य में पड़ने वाली बिजली महादेव की पर्वत–श्रृंखला के उत्तरी छोर में उच्च शिखर के दामन में एक भव्य स्थल पर विराजमान है जिन्हें प्राचीन आदिवासी या मलाणा निवासी कहा जाता है। इसके अधिष्ठात्री देव–शक्ति का नाम देऊ–जमलू अथवा जम्बलू है। कतिपय स्थानीय विद्वानों ने देऊ जमलू को वैदिक एवं सरस्वती सभ्यता के रंग में रंगना चाहा और इसे जमदग्नि–ऋषि बना डाला। परंतु इस मिथ्या धारणा को निरस्त करने के लिए कुल्लू वासियों द्वारा दिया गया बडा–देऊ का नाम ही पर्याप्त है। और तो और एक मुस्लिम यात्री ने भी जमलू को जमालुदीन कह डाला। क्योंकि देऊ जमलू के भण्डार में तथाकथित अकबर महान की मूर्ति विद्यमान है। कहां प्रागैतिहासिक काल के देऊ जमलू जिसकी तुलना सोलहवीं शताब्दी का मुगल शहनशाह जलालुदीन अकबर के साथ की गई है।

वैदिक (सरस्वती) सभ्यता की मिथ्या धारणा को सारहीन प्रमाणित करने के लिए सर्वमान्य तथ्य हो सकता है :– मलाणा आदिवासियों का 'असंस्कृत–भाषी' (व्याकरण विरूद्ध) होना। इनकी बोली कणाशी है जो किन्नर–किरात भाषा की एक उपबोली है जिसका सम्बन्ध तिब्बती–बर्मी भाषा परिवार से है। हां! प्रश्न उठता है कि 'देऊ–जमलू' कौन सी दिव्य शक्ति है और किससे सम्बद्ध है जिसका उत्तर आपको स्वयं मलाणा वासियों से मिल जाता है।

एक लोक प्रचलित जनश्रुति के अनुसार यहां के निवासियों का कथन है कि प्राचीन काल में उनके पूर्वज संसार की छत (जड. जुड., वर्तमान में 'डारी कोंती' (जनपद–या पश्चिमी तिब्बत) स्थित पवित्र पर्वत कैलाश और जलेश्वर मानसरोवर से विस्थापित होकर यहां आए हैं और अपने साथ अधिष्ठात्री देवता जमलू भी। इस जनश्रुति से यह स्पष्ट हो जाता है कि देऊ जमलू प्राचीन विस्मृत प्रदेश जड.–जुड. का देवता है और विस्थापितों का मार्ग 'स्पिति–प्रदेश (वर्तमान में जिला लाहुल स्पिति) होकर कुल्लू पहुंचे थे।

एक अन्य लोकश्रुति के अनुसार जो कुल्लू और स्पिति में समान रूप से प्रचलित है देऊ–जमलू स्पिति के गांव 'हनसे' से कुल्लू के 'मलाणा गांव–पहुंचा है। इस जनश्रुति में कितना तथ्य छिपा है इसकी खोज आवश्यक है।

डा–ला शगचे – इस तथ्य की खोज के लिए मैंने स्पिति के हनसे गांव के कई चक्कर काटे हैं और स्थानीय जानकारों से गहन पूछताछ की। इसके अतिरिक्त हनसे गांव के आस पास के गांवों में जाकर इस तथ्य को जानने का यत्न किया। स्थानीय निष्ठावान विद्वान, जिनसे मैने संबंधित प्रश्न किए, उस सबका एकमत उत्तर था कि हनसे गांव का अधिष्ठाता 'डा–ला अथवा डब–ला शगचे है और बहुत का–ञन–चन (शक्तिमान) देवता है। गांव की ऊपरली उच्च पहाड़ी पर स्थित एक पिरामिड–नुमा पाषाण–खण्ड को दिखाते हुए लोग कहते हैं कि यह पवित्र देवता का प्राकृतिक आवास है। यह पूछे जाने पर कि कुल्लू के मलाणा गांव का बडा–देऊ जमलू कौन है? सब लोगों का उत्तर होता है कि मलाणा के बडा–देऊ को स्पिति के हनसे ग्राम की भोटी भाषा में डा–ला और डब–ला शगचे कहते है। इन दोनों देवताओं में अंतर नहीं मानते हैं। यही उन लोगों का कहना है।

गांव के पीछे कुछ दूरी पर जहां से ढलानदार खड़ी पहाड़ी आरंभ होती है, वहां दो मंदिर भवन निर्मित हैं जिन्हें सुड–मइ–ल्ह–खड. (धर्मपाल देवालय) कहते हैं। मंदिर दो तले के हैं और छतों पर रंग विरंगी पताकाएं लहरा रही हैं। दोनों मंदिरों के भीतर डा–ला शगचे की मूर्तियां स्थान विशेष पर प्रतिष्ठित की गई हैं। मूर्ति की आकृतियां पूर्णतया मध्य एशियाई सेनाध्यक्ष मग–पोन की वेश–भूषा से सुसज्जित हैं। सिर पर 'चंगेज़ी–कबच' शरीर के अंगों में चुस्त बख्तर और पैरों में लंबे बाजू के बूट, एक हाथ में खड़ग, दूसरे हाथ में ढाल की वेश–भूषा में मानों इसी क्षण अधर्मियों का वध करने वाले हों।

इन मंदिरों में से एक पुराना जान पड़ता है तथा दूसरा नव निर्मित है। इन दोनों मंदिरों के समीप एक तीन हाथ ऊंचा सुंदर चबूतरा खड़ा है जिसके ऊपरले भाग में पवित्र देवदार की छोटी छोटी टहनियां हैं जिन पर पत्ते भी हैं और एक अनघड़ पाषाण पिण्ड स्थापित किया गया है। गांव के वरिष्ठ एवं वृद्धजनों का कथन है कि पूर्व समय में इन मंदिरों से भी पूर्व इसी चबूतरे को ल्ह–थो (देवाराम) कहते थे, इस पर समस्त देव कारज संपन्न किए जाते थे। अभी भी इस क्षेत्र में कुछ देवताओं के देव कारज ल्ह –थो पर ही संपन्न किए जाते है।

यहां यह प्रश्न उठता है कि क्या डा–ला शगचे मलाणा में देऊ–जमलू के नाम से विख्यात हुआ होगा, जैसा कि स्पिति और कुल्लू निवासियों की धारणाएं प्रचलित हैं? यह संभव है।

1, मलाणा में आज तक देऊ–जमलू की कोई मूर्ति स्थापित नहीं है। मंदिर निर्माण से पूर्व हनसे में भी डा–ला शगचे की कोई मूर्ति नहीं थी, केवल ल्ह–थो पर बने पाषाण पिण्ड ही देवचिन्ह समझा जाता था।

2, देऊ जमलू को देवताओं की श्रेणी में राजा माना जाता है। इसी प्रकार डा–ला शगचे भी सेनाध्यक्ष होने के कारण राजा की श्रेणी में आता है।

3, मलाणा में देऊ–जमलू का देव–चिन्ह एक 'खड़ग' है। हनसे में डा–ला शगचे के हाथ में 'खड़ग' है। 4, मलाणा में देऊ–जमलू को चांदी एवं अन्य धातुओं के अश्वाकृतियां (चांदी के घोड़े) भेंट स्वरूप अर्पण किए जाते हैं उसी प्रकार हनसे में भी चांदी की अश्वाकृतियां भेंट में दिए जाते हैं और यह मूर्ति भी अश्वारोहण आकार की है। यह बात ध्यातव्य है कि मलाणा भूभाग की भौगोलिक स्थिति घोड़ों को वहां पहुंचने में बाधक है। फिर भी देवता को चांदी आदि धातुओं की अश्वाकृतियां चढ़ाई जाती हैं। देऊ–जमलू अवश्य ही अश्वपालक रहा होगा और वहां के निवासी कभी समतल भाग से विस्थापित होकर आए होंगे।

5, लाहुल के मुख्य रक्षक देवता राजा–घेपड. सद, जिसे देऊ–जमलू का छोटा भाई माना जाता है, पूजा के समय प्रथम भोग डब–ला देवता के नाम चढ़ाया जाता है। इससे ऐसा अनुमान लगाया जा सकता है कि स्पिति और लाहुल क्षेत्र में जमलू देवता को डब–ला कहा जाता हो।

डब–ला का परिचय – डा–ला एक पूर्व बौद्ध एवं तिब्बती देवता है जो तिब्बती मंगोल देव श्रेणी का माना जाता है। शगचे को स्थानीय नाम समझना चाहिए। आरंभिक काल में बोन धर्मी इस देवता की पूजा किया करते थे, तत्पश्चात बौद्ध धर्म का प्रचार प्रसार हुआ और बौद्ध लामाओं ने भी डब–ला को बौद्ध देव श्रेणी में सम्मिलित कर लिया। प्राचीन बोन धर्म में मूर्तिपूजन का प्रावधान नहीं था। अतएव मलाणा और लाहुल के किसी देवी देवता की मूर्तियां स्थापित नहीं हैं। बौद्धधर्म के साथ तिब्बती बोन–धर्म में भी मूर्तिपूजन का श्रीगणेश हुआ। अब वर्तमान में अन्य बौद्ध देवी देवता के साथ तिब्बत और भारतीय तिब्बत में भी डा–ला की मूर्तियां स्थापित हैं।

वर्तमान में डा–ला शब्द को तिब्बती धार्मिक पुस्तकों में तीन तरह से अक्षर भिन्नता के संग लिखे जा रहे हैं। बोन पुस्तकों में स्ग्र–ब्ल (उच्च डा–ला) लिखा मिलता है और प्रायः इसका अर्थ शब्द–सत्व लिया जाता है। इसकी पूजा अर्चना में व्यक्ति विशेष के व्यक्तित्व से संबंधित है जैसे विवेक, दीर्घायु, वाकशक्ति, कान्ति और आभा आदि। स्ग्र–ब्ल की मान्यता बोन अनुयायियों में बोनधर्म के प्रवर्तक तोनपा शेनरब के पूर्वजों के अधिष्ठाता देवता के रूप में है। बौद्धजन दो प्रकार से लिखते हैं ग्र–ल्ह (उच्च डा–ला, तथा अर्थ भिक्षु देव) और दग्र–ल्ह (उच्च डा–ला और अर्थ – अरिदमन देव) अर्थात इसकी पूजा अर्चना भिक्षुओं के रक्षक और बौद्धधर्म के विकास में सहायक तथा अधर्मी और सधर्म विरोधियों के नाशक के रूप में किए जाते हैं।

गांव बारीतूनी, खराहल

मलाणा के सामाजिक संस्कार

–डॉ सूरत ठाकुर

चन्द्रखणी पर्वत की गोदी में अवस्थित मलाणा गांव की अपनी परंपराएं हैं, रीति रिवाज़ हैं और सामाजिक संस्कार हैं। यहां जन्म से लेकर मृत्यु तक सभी प्रमुख संस्कार अपने ढंग से निभाये जाते हैं। बच्चे के जन्म संस्कार में शुद्धता एवं शुचिता पर विशेष ध्यान रखा जाता है। प्रसूता होने से पूर्व जच्चा को खुड़ में रखा जाता है। जब बच्चे का जन्म होता है तब जच्चा बच्चा दोनों को पन्द्रह दिन तक घर से बाहर एक लकड़ी के तम्बू (टापरे) में रखा जाता है। इन दिनों में इनसे स्पर्श करना मना होता है। यदि कोई व्यक्ति गलती से छू जाये तो उसे बकरा काटकर शुद्धि करनी पड़ती है। सर्दी हो या गर्मी, जिस भी मौसम में महिला प्रसूता होती है, उसे घर से बाहर इसी तम्बू में रहना पड़ता है। इस दौरान गांव के लोग उस परिवार या कुल वालों से भी स्पर्श नहीं करते। मलाणा सहित कुल्लू के अधिकांश गांवों में जहां आधुनिकता का बोलबाला नहीं है इन सब में प्रसूता होने की 'जूठ' को विशेष महत्व दिया जाता है। जब तक उस परिवार की शुद्धि नहीं होती, तब तक न तो कोई उनसे स्पर्श करता है और न ही उनके घर में जाकर अन्न जल ग्रहण करता है। बच्चा होने के सोहलवें दिन घर की लिपाई पोताई की जाती है। सोने तथा पहनने के सभी कपड़े साफ किए जाते हैं साफ सफाई करने के बाद ही जच्चा बच्चा को नहलाकर घर के अंदर लाया जाता है। इस गांव की विशेषता है कि यहां पर लड़का हो या लड़की दोनों के जन्म पर खुशियां मनाई जाती हैं। सोहलवें दिन अपने सगे संबंधियों को लड़का लड़की दोनों के पैदा होने पर बकरा खिलाकर खुशियां मनाई जाती हैं। प्रसूता होने पर महिला को 'घीऊ–बाड़ी', एक विशेष पकवान, खिलाने की परंपरा है। इसके सेवन से महिला को ठण्ड नहीं लगती है तथा उसे पौष्टिकता प्राप्त होती है।

लड़का हो या लड़की उसका नामकरण सप्ताह के दिनों अथवा मास के नाम के आधार पर किया जाता है। यदि कोई बच्चा वैसाख के मास में पैदा हुआ हो तो उसका नाम बसाखू, ज्येष्ठ में उत्पन्न होने वाले को जेठू, आषाढ में षाठू । इसी तरह सोमवार को पैदा होने वाले को सुआरू, मंगल में मोंगलू, बुध में बोधू आदि नाम रखने की परंपरा है। लड़का हो तो नाम के अंत में ऊ कहने की परंपरा है। जैसे बसाखू। लड़की के नाम के अंत में ई कहने की रीत है जैसे माघी, चैत्री, मौंगली आदि आदि।

लड़कों के बाल पांच वर्ष की उमर में काटे जाते हैं। लड़के के पिता और चाचा द्वारा बाल काटे जाते हैं। बच्चे को सुबह होने पर मनीकर्ण तीर्थ पर ले जाया जाता है। वहां उसके बालों को चाचा काटता है। तत्पश्चात उसे मनीकर्ण के गर्म जल कुण्डों में स्नान करवाया जाता है। स्नान के बाद उसे घर लाया जाता है। उस रात उसे घर के बाहर बने उसी तम्बू में रखा जाता है जहां उसको शुरू के पन्द्रह दिनों में रखा हुआ होता है। रात भर वहीं रखने के बाद अगली सुबह सूरज निकलने से पूर्व उस पर गौमूत्र छिड़ककर घर के अन्दर लाया जाता है। उसके बाद सगे संबंधियों को बकरा काट कर धाम खिलाई जाती है।

प्रथा यहां मुख्यतः तीन प्रकार से निभाई जाती है। प्रथम विधि के अनुसार बड़े बूढ़ों द्वारा बात चलाकर लड़के तथा लड़की का विवाह निश्चित किया जाता है। इस गांव में चैत्र मास में युवा लड़के तथा लड़कियां शाम होने पर भोजनादि के बाद देवता की सौह में इकट्ठा होते है। वहां रात भर लालहड़ी नृत्य चलता है। इसी दौरान लड़का लड़की एक दूसरे को पसंद करते हैं। एक दूसरे को विवाह के लिए पसंद करने के बाद घर वालों को इसकी सूचना दी जाती है। यदि घर के बड़ों को उनकी पसंद जंच जाये तो वे आपस में बात चलाकर विवाह की तिथि पक्की करते हैं। विवाह की तिथि निश्चित करने के लिए देवता के मंदिर में जाकर देवता से अनुमति ली जानी आवश्यक होती है। सहमति होने पर लड़के वाले लड़की वालों को एक रूपया शगुन के रूप में देते हैं। निश्चित दिन बारात लड़की के घर जाती है। बारात में 9, 11, या 13 आदमी होते हैं। सुबह होने पर बारात वापिस लौटती है। लौटने पर लडके वाले पूरे गांव को धाम खिलाते हैं। खाने पीने नाचने गाने का दौर चलता है।

दूसरे प्रकार का विवाह गंधर्व विवाह होता है। लड़के लड़की की पसंद को कई बार उनके घर वाले नकार देते हैं। उस स्थिति में वे भाग कर विवाह करते हैं। कुछ दिन गांव से बाहर दोघरों में रहते हैं। उनकी तलाश शुरू होती है। लड़के के घर वाले उन्हें घर लाते हैं। घर लाने के बाद उन्हें देवता के दरवार में हारका में उपस्थित होना पड़ता है। उनके विवाह की मान्यता दिलाने के लिए गांव वालों के समक्ष लड़के का बाप

लड़की के बाप को एक पगड़ी पहनाता है और 15 रूपये दंड स्वरूप प्रदान करता है। तत्पश्चात सभी गांव वाले उन्हें आर्शिवाद देते हैं।

मलाणा गांव की खूबी यह है कि यहां पर महिला के विधवा होने पर दूसरा विवाह करने की पूरी स्वतंत्रता है। विधवा होने के एक वर्ष बाद विधवा अपनी इच्छा से दूसरा विवाह कर सकती है। यदि कोई पुरूष अपनी स्त्री को तलाक देना चाहे तो उसे उस स्त्री को छेती के रूप में एक हज़ार रूपये देने पड़ते हैं। यदि पत्नी पति को छोड़कर दूसरा विवाह कर ले तो उसके नये पति को एक हज़ार दो सौ रूपये पहले पति को हर्जाने के रूप में देने पड़ते हैं।

मृत्यु होने पर देह को जलाने के तीन दिन तक शोक मनाया जाता है। हड्डियों को गंगा में बहाने के लिए हरिद्वार ले जाने की परंपरा नहीं है। हड्डियों को गांव के पास बहती खड्ड में ही प्रवाहित किया जाता है।

मलाणा के इन सभी संस्कारों में वैदिक मंत्रों का प्रयोग नहीं किया जाता और न ही किसी पुरोहित की आवश्यकता होती है। इनका प्रमुख देवता जमलू है वही इनके सभी संस्कारों तथा परंपराओं का साक्षी होता है।

<u>हिमाचली टोटके</u>

हमको होता सेठ

– तोबदन

सुगु–पारा, बेचकर घोड़ा–खच्चर।
घर को होता नौकर, हमको होता ठाठ।

लुगज़ी (चरवाहा) होता बिहर को।
घास कटाई नेपल को रमरो।
आधा गुमता भेड़, आधा चुनता घास।

अपना अपना घर, अपना अपना पेट।
किसको होता दर्द, किस को होता पेट।
हमको होता सेठ, छोटा होता बिलगेट।

A VALLEY OF ASYLUM: MALANA

- Col Prem

Malana is the oldest democracy consisting of a community of about 1000 people who live on a 9000 ft high hanging valley in the Western Himalaya, independent of all outside influence till the recent past, and one of the many remarkable thing is their language. Some philologist claim to find definite links between Malani, Magyar and Finnish, it is also allied – most understandably – to Pharsi. A few words of Malani language is however similar or same as is found in Lahoul and Kinnaur. Archeologists and anthropologists estimate that the Malanis have been living on this remote – yet beautiful valley for about 5000 years. Some say (Malanis seem to believe) they are the remnants or descendents of Alexander the great's army and their religion, a primitive form of Hinduism, consists in the worship of god Jamdagini – also known, more pronouncedly as Jamlu. Jamlu is believed to be the elder brother of Raja Ghepen – the "ISHT DEV" of Lahouli's Jamlu is supposed to be. Saint/Rishi and like Malani's, he has, independent nature and does not pay homage even to Raghunathji – the principal god of the Kullu valley, to whom most other local gods do reverence. During the famous Dushera festival, Jamlu comes to the east bank of river Beas and never comes to the site of the festival where most of the other gods from the valley assemble to do reverence to Raghunath.

All the cultivated land around Malana are regarded as Jamlu's property, the Malani's being merely it's tenants. The village treasury is also his property. And the treasure house is known to contain uncountable quantities of cash, jewels, gold and silver ornaments and large number number of silver horses which are the customary offering to Jamlu.

Unlike the average Hindu god Jamlu is not represented by any image or idol, but by a slab of stone which lies in the centre of a small grassy plot at the edge of the village. This stone measuring approximately three feet by two across and about 18 inches high, looks so exactly like millions of other slabs scattered around the region.

When the Malanis require money for any communal expense the 'gur' – as they call their priest or Jamlu's spokesman – climb on to the roof of the treasure house (which is windowless and has only one opening), descends into the pitch dark chamber and emerges with an armful of whatever comes to hand. Obviously the value of the treasure thus collected varies from visit to visit and the Malanis believe that Jamlu wishes them to spend no more on any particular project than the 'gur' chances to find in his blind gropings.

To the Malani their high valley is known as the "Valley of Asylum or Refuge", an oral tradition says that the original inhabitants fled there during long forgotten crisis. Now out of gratitude to Jamlu, who protected their ancestors' provided asylum, these people unquestioningly offer refuge to any fleeing from any sort of trouble – though only caste Hindu's are permitted to enter the village itself. The provision of sanctuary is occasionally of use to local criminal, who know that the villagers won't hand them to police or local authorities.

A committee of 11 elected elders govern the community. When the Govt. of India insisted in opening a village school in Malana a few years ago, the elders forbade anyone attending it – though for the past few years it has had some pupil. Malanis are gradually changing and are participating in the processes of the administration – fully conscious of their unique heritage and traditions for better or for worst.

The Malanis used to collect roots of plants used to make incense and many medicinal herbs which they use to sell or, but most of their cash come from hunting the muk-deer. This animal use to abound in the valley in the past. Due to tourism the traditional root collection has unfortunately given way to the thriving business of Charas and other drugs. The hike from Jari through indescribably lovely valley – and imperfect day of clear blue skies, golden, sunshine, with the air so pure that merely to breathe is a joy. It is not suprising that the Kullu Valley and it's side valleys were chosen by the sages and saints in Vedic times for meditation and prayers. Each of these valleys, and each hamlet in each valley, has its own tutelary deity and the local religion remains strongly tinged with animism.

It is a grievous offence against the Malanis' religion to bring leather into their village territory. One has to remove all the leather from their possession or person. Malanis are now citizens of the World's largest democracy and are given the opportunity to vote and participate in the processes and ways of a nation.

Mirkuladevi Temple, Udaipur, Lahaul - conservation measures

- C. DORJE

Udaipur, located on the right bank of the river Chandrabhaga or the Chenab at its confluence with the Miyar Nala and at a height of 2600 metres above mean sea level, is about 66 km away from Keylong, the district headquarters. The village is also locally known by the name, Margula, Mirkula, Markula, etc. and it was renamed Udaipur when Raja Udai Singh (AD 1690-1770) of Chamba, raised it to the status of a district centre. The Mirkula Devi temple occupies the pride of the place amongst the wooden shrines of the Western Himalayas on account of its great antiquity as well as sculptural and architectural embellishment in classical style. Not only that it is also sacred to the Hindus and Buddhists alike. The Buddhists addressed the enshrined goddess as Vajra-Varahi (Dorje Phagmo). As such it is a prominent centre for pilgrims. It is a remarkable example of timber architecture. Though, it bears evident traces of reconstruction and partial renovation, it has marvelously withstood, the rigorous of the climate and even the perils of human vandalism.

This temple is dedicated to goddess Mahisasurmardini locally known as Mirkula Devi whose metal icon adorns the sanctum. It is built of rubble filled in between wooden rafters and stands on a rectangular platform of roughly cut stones on a slope of hill. The six-lined inscription engraved on the pedestal of the iron states that it was cast by one Panjamanaka Jinaka from Bhadravah (Kashmir) in the Sastra era 4645 (AD 1569-70) and dedicated by Thakur Himapala. It is said that the original icon enshrined in the temple was that of Kali which was carried away / or destroyed by the invaders. The original shrine was built sometimes in the seventh century AD when the village of Trilokinath and Margula (Udaipur) formed part of the Bharmour kingdom. In the eighth century, king of Kashmir invaded Bharmour and it was under their control till early eleventh century AD. It is also said that the queen Suryamati, the wife of king Anantadeva restored this shrine through masons brought from Kashmir. The timber shrine was given facelift, its imposing doors, ceiling, *mandapa* and pillars were carved a new in Kashmir temple style.

The temple, on plan, comprises of a square sanctum with its ambulatory, a pillared *mandapa* and an annexe. In its western half, there is the sanctuary proper, cella detached from the enclosing wall by a circumbabulating passage; the eastern half is occupied by a *mandapa* with broad balcony window on the south and a ceiling supported by four pillars. Two more pillars and the outer annexe have been added at a later stage. A silver image of Mahisamardini with an incised pedestal, heavily draped in silk and other cotton beneath a parasol, set up on a round stone *pitha*.

The whole temple is covered with steep gable roof of wooden shingles/planks, which over the sanctum proper rises to a height of 15 m above the ground in a steep pyramidal form divided into seven unequal parts / layers and surmounted by an *amalaka* and finials. The gable roof of the *mandapa* is flat at cornice level, thence onwards are arranged seven rows of wooden shingles. At the apex of the *sikhara* is a box finial supporting a metal *kalasa*; while on the massive carved ridge-pole are fixed a pointed brass finial and another *kalasa* into which is thrust an iron *trisula*. Behind the *trisula* is a pair of horns, tied together and slung across the ridge-pole. The geometry of this double-roof is clearly the result of centuries of experience in designing the most efficient shape for shedding snow, while at the same time conforming to the general configuration of the *sikhara*-plus-*antarala* unit of Hindu temples in the plain.

The temple can no longer be entered directly from the front because of a flat roofed extension annexed to the *mandapa*. One, therefore, goes in through door in the side and turns left to face the original entrance beneath the beaten earthen roof of the annexe. Across the bare *mandapa* floor, under the pointed *sikhara* steeple, stands the elaborately carved wooden façade of the sanctum. The

façade consists of jambs and lintels which are not arranged in usual succession of receding one after the other. The outer most of set of jambs is divided into three arched niches. The lower most niches are supported by miniature Yaksa between two line on each side. They enshrine Ganga and Yamuna on their respective *vahanas*. The next two jambs composed of flower with open faced rosettes and lotus placed at wide intervals. The next set comprises of five niches on both sides with *dasavtaras* panel. Then follow other two niches decorated with round and winding creepers. The next two frames have four oblong niches with dancing *apsaras* and scroll motifs. The lintels depicts a row of miniature shrine models with gable roof of Kashmiri type. The figure shown in the shrine are four-armed deity on a ram, Surya riding on a chariot of the seven horses and four arm deity seated on a lion.

The wooden ceiling of the *mandapa* rests on four pillars and has nine unequal panels decorated with broad lotuses. It is arranged in the usual lentern style by means of two sets of four triangular corner pieces, each decorated with *kirti-mukhas* and border of half square and half rosettes. The central one has four circles of petals and the fourth one is decorated with a chain of *vajras*. The oblong panels on the east and west side have panel of *vidyadharas* and *gandharava* pairs flying and playing musical instruments, etc. The panel on the west has a sixteen-armed Siva together with Parvati, Ganesa, Karttikeya and Nandi. On the northern side, there is a panel depicting Buddha clad in monastic robes sits on diamond seat, calling the earth to witness. Two relief panels are on both sides of the balcony window. The relief on the eastern side represent the Trivikramavatara and the panels on the western side represents churning of the ocean and the defeat of the *asuras*. On either side of the entrance of the *mandapa* are shown two crudely executed wooden images of *dwarpalas* carrying swords and pots in their two hands. Their skulls crowns resemble those worn by the Bhairava shown on the facade and on the western panel of the ceiling.

The present appearance of the structure is a result of repeated additions and alterations but the carvings on the façade, window panels, four pillars and relief on the ceiling are datable to tenth-eleventh century AD whereas the architraves, the ceiling, two additional pillars in the front of façade and *dwarapalas* to sixteenth-seventeenth century AD and contemporary with the main image.

In view of its unique architectural importance and its neglect of quite a longtime in the year 1988, it was declared protected as a monument of national importance. Prior to that, it was under the protection of the State Government of Himachal Pradesh.

As stated above, this temple was repaired from time to time. It is said that in the year 1958, the damaged and decayed wooden shingles of the *sikhara* were replaced with new ones. Since then, no attempt has been made to repair the wooden roof / shingles of the temple but the walls on the north and west of the ambulatory of the sanctum and *mandapa,* respectively were repaired. The original fabric of the flooring of the *pradakshina*/passage of the sanctum of the temple was also changed recently by cement concrete flooring.

Due to constant exposure to weather the wooden planks / shingles have decayed and as such there is leakage from the top endangering the inner invaluable wooden carvings. As per local traditions and customs, the repairs to the top roof of the temple is to be completed within seven days and the commencement of the repair work is done by the elderly member of a particular family of the village with other workers with empty stomach without consuming a drop of water. Rituals and prayers are performed before commencement of work, during and after completion.

In the year 2000, the long pending repair to the roof of the temple was attended. The decayed wooden shingles were removed layer-wise after complete photo-documentation and preparation of drawings. Few decayed structural members of *mandapa* and *sikhara* were also

replaced. Then all the inner timber joints were checked and the weak joints were strengthened by providing MS flats. After repositioning the dislocated members and strengthening work, new wooden shingles of Deodar wood were provided following the original pattern. A single length wooden ridge pole was provided at the top of roof of the *mandapa*. The ridge pole of required length, shape and size was prepared from a mature tree on the same day and was transported manually to the work site and placed straightway in position at the top in a ceremonial way without keeping it on ground anywhere. Then the entire exterior top of the surface was applied with a coat of preservative for longitivity. This whole work was completed within seven days .

The *parikarma* area of the sanctum was also exposed to check for any damage to the wooden members of the foundation and the decayed and damaged wooden members were removed and gaps thus created were properly filled with stone masonry. After attending necessary packing and strengthening, wooden flooring was provided to the *parikrama* area. The damaged beams of the sanctum and the *mandapa* were given additional supports. In addition to the above, the stone platform of the temple was also repaired. The height of the retaining wall on the hill slope was also raised. The decayed plaster of the entire temple including annexe was raked out and replastered. The dislodged and missing stones of the steps were reset. For safety and security of the temple carvings and antiquities housed therein, the door and windows of the annexe were provided with MS grill. With these conservation measures attended by the ASI team, the temple has been preserved for posterity.

References

1. Chhabra, B.Ch.: *Antiquities of Chamba State*, Vol.II, Delhi, 1957.
2. Francke, A.H.: *Antiquities of Indian Tibet*, (in two parts), Calcutta, 1914 and 1926.
3. Francke, A.H.: *History of Western Tibet*, London, 1907.
4. Goetz, Hermman : *The Early Wooden Temples of Chamba*, London, 1955.
5. Grunwedel, A.: *Mythologie des Buddhismus in Tibet und der Mongolei*, Leipzig, 1900.
6. *Himachal Pradesh District Gazetteer, Lahaul & Spiti*, Shimla, 1975.
7. Hutchison, J.: *Chamba State Gazetteer*, Lahore, 1910.
8. Hutchison, J. and Vogel, J.Ph.: *History of Punjabi Hill States*, Lahore, 1933.
9. Nagar, Shanti Lal : *The Temples of Himachal Pradesh*, New Delhi, 1990.
10. Ohri, V.C. ed. : *Arts of Himachal*, Simla, 1975.
11. Vogel, J.Ph.: *Catalogue of the Bhuri Singh Museum*, Calcutta, 1909.
12. Vogel, J.Ph.: *Antiquities of Chamba State*, Archaeological Survey of India, New Imperial Series, Vol.XXXVI, Part 1 (Reprint), New Delhi, 1994.

Archaeological Survey of India

Permo-Triassic Fossils from the Tandi Group of Lahaul Himalaya:Their Stratigraphic and Palaeogeographic Significance

-Dr. K.C. Prashara

Abstract: The reported fossil assemblage, when integrated together with earlier known fossils, indicates an age range of Permian (286 to 248 million years ago) to middle Jurassic (208 to 144 million years ago) for the Tandi Group. The deposition of the Tandi Group over the Preambrian rocks represents a major Permian (Djulfian) transgressin in the area from Kashmir-Bhallesh-Chamba region, whereafter deposition in the area continued till Jurassic.

INTRODUCTION

The Tandi Group comprises a synclinally folded sequence, predominantly of carbonate rocks, in Lahaul area of Lahaul-Spiti district, Himachal Pradesh. It occurs as a giant outlier resting unconformably over the Precambrian Batal Formation (Fig. 1). The unconformity between these two stratigraphic units is represented in Nilgarh section by a lenticular grit/conglomerate bed.. These rocks were earlier thought to be Permo-Carboniferous in age and subsequently,as Precambrian. However, with the discovery of fossils, these rocks have been variously assigned to Silurian, Permian, Triassic and Jurassic. The fossils so far described have been recorded from different transverse sections of the Tandi Group and their precise location in the litho-column is not known. The importance of the present fossil assemblage is that they are guide forms and come from a measured section (Fig. 2).

The fossils have been registered with the Palaeontology and Stratigraphy Division, Geological Survey of India, Calcutta. Their registration numbers are mentioned alongwith the explanation of Fig. 2.

FOSSIL ASSEMBLAGE AND STRATIGRAPHIC LEVELS

The present note records *Etheripecten* sp. (Fig. e.), *Claraia concentrica* (Fig. d), *Cyclolobus* sp. (Fig. a and b) *Koninckites* sp. (Fig. c and h), *Greisbachites* sp. (Fig. f) and ?*Glyptophiceras* sp. (Fig. g), from a section exposed between Dilburi and Gondhla-Nilgarh areas. The three main lithological sub-divisions deciphered (Figs. 2 and 3) correspond to the Kukti, Gushal and Dilburi Formations of the Tandi Group.

Out of the aforesaid fossils, the assemblage of *Etheripecten* sp., *Cyelolobus* sp. and *Claraia concentriac* has been recovered from the upper part of the Kukti Formation (fig. 2). *Cloraia* first makes its appearance in the uppermost Permian and continues up to *Opheceras* zone of lower part of the early Triassic. This association with *Etheripecten* sp. may represent uppermost Permian (Dorshamian) age for the Kukti Formation. *Koninckites* sp., *Greisbachites* sp. and ?*Glyptophiceras* sp. Found in lower part of the Gushal Formation (Fig. 2) make a characteristic assemblage of Scythian age (Lower Triassic). Thus, the fossils presently recovered from the Kukti-Ghoshal contact zone represent sections close to the Permo-Trias boundary.

THE AGE OF THE TANDI GROUPS

Besides the present fossil assemblage, earlier described fossils include *Favosites*, *Amplexus coralloides*, *Michelina salinaria*, *Wagenophyllum indicum*, *Spirifer* sp., *Rhynchonella* sp. *Japonites sugriva*. *Ptychites* aff. *everesti*, *Koninckites* cf. *Yudhisthiara*., *Neospathodus dieneri* Sweet, *Xaniognathus* sp., *Ellisonia* sp., *Neogondolella* sp. and *Montlivaltia* sp., *Thamnasteria* sp. *Cenoceras*

किया। सन् 1947 में कांग्रेस पार्टी में शमिल हो गए और तब से कांग्रेस के कार्यकर्ता हैं। उनके पिता नीलम आदि कीमती पत्थरों का व्यापार करते थे। रामनाथ ने भी नौ–दस वर्ष यह काम किया। इनके घर का नाम लेह–की–दो (नीचे वाले) है और रूहस (हड्डी) ग्याड. शिड.पा है। रामलोक उनसे चार–पांच वर्ष बड़े थे।

सन् 1958 में रामनाथ अपने धन्धे के सम्बन्ध में कलकता जा रहे थे। उनके साथ उनके साथी टशी तन्डुव थे। इलाहबाद रेलवे स्टेशन पर उनकी मुलाकात एक युवक से हुई। वह अखबार बेच रहा था। आपस में बातचीत हुई और जान पहचान हो गई। मालूम हुआ सभी लाहुल से हैं। रामलोक ने अपनी किताब की एक प्रति रामनाथ को दी जो उन्होंने कुल्लू में किसी को दे दी। उसमें कहानियां थी और अपने जीवन के बारे में भी कुछ लिखा था। रामनाथ बताते हैं इसके पश्चात रामलोक के विषय में कोई जानकारी नहीं है। इस समय वह लगभग 42 वर्ष के थे।

रामलोक के विषय में कुछ प्रश्न उठते है क्या उनकी पुस्तक मददो नजर उपलब्ध है, क्या उनकी दूसरी पुस्तक :देव भूमिः प्रकाशित हुई हैं, क्या उन्होंने और भी किताबे लिखीं? ये तथ्य उनके जीवन और व्यतित्व को और उजागर करने में सहायक होंगी।

मेलिड़. का मंदिर

–रनबीर शाशनी

मेलिड़. के मंदिर के पुजारी, उम्र 75 साल, का नाम सुखदयाल है। पिता का नाम देवीचन्द तथा दादा का नाम सुरथान था। इनके बड़े भाई सूरतराम, ग्राहणी के समय, महादेव महादेव बोला करते थे। पांच–छह साल पूर्व उनका देहान्त हुआ। पिता जी आज से 35–40 वर्ष पूर्व तकरीबन 70 वर्ष की उम्र में स्वर्ग सिधार गए। ये काशी से पढ़ लिख कर आए थे। किन्तु स्वयं सुखदयाल खेती बाड़ी के कारण निरे अनपढ़ रहे। पुजारी के पूजा कक्ष अर्थात 'थान' या देवस्थान के पूर्वी दीवार की छोटी सी जगह में पत्थर की शिव पिण्ड़ी, धातु की घण्टी, दीया, एक धुणकड़छी तथा पीतल की पतली सी बांसुरी आदि रखे गए हैं। धूप–दीप फूल–भेंट आदि भी इसी जगह महादेव को अर्पित किए जाते हैं। इसी कक्ष के उत्तरी दीवार पर 'माकोल' अर्थात सफेद चूना मिटटी से तर्जनी से बनाई गई भितिचित्र है। जिसकी नकल मैंने पेंसिल से की है। यह चित्र हर वर्ष पुजारी अपने हाथों से बनाता है। सर्व प्रथम चत्वर रेखाएं जिनके साथ–साथ पंखुडियों जैसी हों खींची जाती है। इसके उपरी हिस्से में शिखरनुमा आकृति के दायीं ओर सूरज तथा बांयी ओर चन्द्रमा की आकृतियां बनाई गई हैं। शिखर के भीतर के उपरी भाग में पढ़कू अर्थात गऊ तथा बांयी ओर एक आदमी (शायद स्वयं पुजारी का चित्र) दायीं ओर शड़.ण अर्थात 'सांगल' केंद्र में शिव पिण्डी जिसके दांयीं ओर टोटू अर्थात (गूंदे गए सतू की पहाडनुमा आकृति) तथा 'लक्शा' (भेड़ का दायां कंधा) तथा इस पिण्ड़ी के नीचे 'कंघी' तथा 'घण्टी' का व बांयी ओर 'यौरा' अर्थात (जौ की पीली पौध जिन्हें धूप से वंचित रख कर तैयार किया जाता है); जिन्हें शुभ शगुन तथा सम्पन्नता का प्रतीक माना जाता है, के चित्र बने हुए हैं। एक भेड़ तथा संजवा अर्थात गूंदे आटे का दीया आदि के चित्र बने हुए थे। इनके साथ–साथ धुणकड़छी का चित्र भी था। इन सभी चित्रों से शायद यही अर्थ निकलता है कि हे महादेव हम आपकी पूजा, अर्थात जब तक सूरज–चांद पृथ्वी है, तब तक करते रहेंगे। आप पशुपति नाथ है। आप धन–धान्य से हमें परिपूर्ण कर दें। आपकी सेवा में पदकू ,धूण, टोटू, लक्शा, भेड़ हम सब अर्पण करते हैं।

पुजारी हर रोज़ सुबह सवेरे इसी कक्ष में पूजा अर्चना धूप रोज़ करते हैं। इसी पूजा कक्ष के कोने में एक तलवार तथा 'टट्टर' (Maple Pod) फूल की फली रखी है। तलवार से तात्पर्य अज्ञानता के अंधेरे को चीर कर ज्ञान के प्रकाश में लाए तथा इस फूल की फली की तरह हमारे कुनबे की वृद्धि हो। यह विवरण 2008 को आयोजित जागरा अनुष्ठान के प्रत्यक्ष दर्शन के उपरान्त तैयार किया है। जागरे के दिन सभी पुरूष वर्ग व कुछ स्त्रियों तथा नगारची बेंजारू के साथ साथ उनके समुदाय के लोग पुजारी के घर में एकत्रित होते हैं। यहां सभी लोगों की आव–भगत मीठी तथा नमकीन चाय, लुगड़ी, शराब तथा 'शागुण' आदि से की जाती है। गूर तथा भाट जितने भी हो चाहे उम्र में छोटे क्यो न हो, सभी को उपरी आसन पे बिठाए जाते हैं। लोट गांववासियों के पहुंचने पर ही शागुण आदि किए जाते हैं। क्योंकि लोट गांववासियों को तथा इसके पूर्ववर्ती गांव वासियों को देवी पार्वती के मायके वाले माने जाते हैं तथा लोट के पश्चिमी हिस्से के अर्थात रानी की कोठी के पश्चिमवर्ती गांववासियों को उनका ससुराल। अतः देवी पार्वती के मायके वालों के पहुंचने पर ही सारी कार्यवाही शुरू की जाती है।

मेलिड़ गांव की औरतें तथा मर्द सभी पुजारी के घर में तथा मंदिर के काम–काज में हाथ बटाते हैं। इस कार्य को दैविक कार्य माना जाता है जिस गांव के जिस घर की तरफ से जागरा आयोजित किया जाता है, उस गांव के युवा व औरतें पुजारी के घर में तथा मंदिर में खाना बनाने, चाय बनाने चाय व खाना आदि परोसने के काम में हाथ बटाते हैं। मेलिड• गांव वालों को एक दिन पहले न्यौता दिया जाता है 'गुजुड़' (लोगों का) 'हजूम' मंदिर के प्रांगण में पहुंचता है। तब सभी औरतें 'पुग' (भुने हुए जौ के दाने) तथा फूलादि उनकी ओर फैंकते हैं। आर्थत शुभ स्वागत करते थे।

पुजारी के अनुसार शिव मंदिर का छत जीर्णोद्वार से पूर्व लकड़ी के तख्तों से निर्मित था। आज यह टिन का बना हुआ है। मंदिर के मुख्य द्वार उनकी यादाश्त के अनुसार पश्चिम की ओर ही खुलता था। मंदिर की पुरातनता के बारे तथा उनके अपने वंश के द्वारा कश्मीर से लाहौल की ओर पलायन के बारे उन्हें कुछ मालूम नहीं।

महादेव के कई गूर मशहूर हुए हैं। जो आज जीवित हैं उनमें है गोशाल के गूर लाल मेमे तथा वारी के गूर छेरिग फुंचोग हैं। इन दोनों गूर की काफी मान सम्मान है। ये जन कही ग्राहणी नहीं लगाते हैं। इनके

अतिरिक्त लोट के बलूराम, दिवंगत, बांसुरी वादक तथा नगारची भी कई हुए हैं। लोट के नगारची बलूराम, श्री देव, नंदराम सभी दिवंगत, बांसुरी वादक (बेंजारू) थे। कांशीराम, डोलाराम सभी दिवंगत। आजकल जो जीवित हैं वे हैं तेजराम (तेजू), जुण्ड़ा के बेंजारू तथा रामदास किरतिंग के तथा लोट के भागराम नगारची। इस जागरे का मुख्य आकर्षण गूरों की ग्राहणी (देउखेल) ही होता है। यजमान (जागरा आयोजनकर्ता) धुणकड़छी तथा सांगल उठाए हुए रहता है। जय बोलो धूड़ू स्वामी की जय। जय बोलो शिखर वासी की जय। बोलो शिव शंकर कैलाश की जय। बोलो भोले नाथ की जय। माता मराड़ी की जय। केलिंग बजीर की जय। न जाने कितनी ही जयकारियां शेष सभी पुरूष बर्ग बट्ट वाण के साथ लगाते हैं। शिवजी के गूर गद्दियों की बोली में बोल देते हैं। ठारह नाग तथा राजा घेपन के गुर कुल्लू की बोली में बोलते हैं।

इससे स्पष्ट है कि ये देवता स्थानीय देवता नहीं हैं। अन्यथा इनकी बोली लाहुली बोली में होती। किंतु प्रश्नकर्ता किसी भी भाषा या बोली में पूछे उन्हें वे प्रायः समझ जाते हैं। अर्थात लाहुली बोली में कोई पूछे तो उत्तर तो अपनी ही बोली (अर्थात शिवजी) के गूर गद्दियो की बोली में तथा अन्य देवताओं के गूर उनकी अपनी अपनी बोली में देते हैं।

आज से 35–40 वर्ष पूर्व अनेकों बलियां देने की प्रथा थी। जैसे जागरे में बलियां देते हैं वैसे ही 'चेत्रोड़ी' के दिन एक लच़ा तथा एक भेड़ की बलियां दी जाती थी। 'उतना' तथा 'शेक्चुम' को छोड़ शेष किसी भी छोटे–मोटे अवसरों पर बलियां दी जाती थी। पहली बार जब कुहल से पानी लाना हो तब यंगरंग सद की मनौती के समय तब न्हाद अर्थात (किसी व्यक्ति के मरणोपरान्त आम लोगों के लिए रास्ते में आराम करने हेतु जगह) बनाते समय रवालिड़., मेलिड़. तथा केलिड़. सभी देवताओं के लिए एक–एक बलि दी जाती थी। लोट के शाशनी के घर लोग हर बर्ष रवालिड़. सद के लिए बुगरी तीन सेर या रेन अनाज तथा एक खीड़ा (भेड़ का एक साल का बच्चा) तथा 'टोटू' आदि दिया करते थे। बाद में शाशनी घर के सोमदेव के आग्रह पर इस से छुटकारा मिला। भुतुड़.रू परिवार (लोट) के 'लेचुड़' निचले घर के साथ वाले एक तिकोने पत्थर के सामने एक भेड़ की बलि दिया करते थे। कभी बलियों की कुल संख्या 19 या फिर 21 तक पहुंच जाया करती थी। गोशाल गांव तथा उसके निकटस्थ गांवों में ये कम भी हुए या फिर बंद हो गए।

मंदिर के बाहर उत्तरी भाग में चौकोर योनि पर दक्षिणाभिमुख त्रिमूर्ति अवस्थित है जिसके अगल–बगल की दो मुखाकृतियां छोटी–छोटी है पर पर्याप्त स्पष्ट है। किंतु मध्य भाग की तृतीय मुखाकृति बड़ी रही होगी पर भग्नावस्था में है। सम्भवतया यह महेश की ही रही होगी। दोनों भुजाएं भी भग्नावस्था में है। दायीं भुजा के नीचे नन्दी बैल तथा गणेश की आकृतियां तथा बांयीं ओर की भुजा के नीचे किसी गण की आकृति उकेरी गई हैं। ये सभी मूर्तियां एक ही पत्थर को घड़ कर बनाई गई हैं। दांयीं ओर पतला सा और बांयी ओर मोटा लिंग बना हुआ है। योनि मुख पूर्व की ओर है। इस त्रिमूर्ति के दांयीं ओर महिलाओं के लिए सुरक्षित स्थान है। यहां मर्द नहीं बैठ सकते। मंदिर के भीतर दो कक्ष हैं। पहला प्रवेश द्वार के निकट है, जो विशेष बड़ा नहीं। मंदिर के मुख्य द्वार की चौखट पर द्वार पर बारीक नक्काशियां की गई हैं। कुछ चौखटों को जिन्हें पुनः प्रयोग के लायक नहीं थे उन्हें कक्ष के कोनों में रखे गए। द्वार पर सहस्त्र पत्रक कमल का चित्र बनाया गया है तथा भीतरी कक्ष के द्वार के चौखटों पर अनेकों देवी देवताओ के चित्र उकेरे गए है किंतु इन्हें पहचानना अति दुष्कर है। पर घी अथवा मक्खन के लगातार लेपन से ये लकड़ियां सड़ी नहीं।

गर्भ गृह के केंद्र में चौकोर योनि जिसका मुख उत्तर की ओर है इसके उपर पर्याप्त बड़ा शिवलिंग है। इसके दक्षिणी पश्चिम कोने तथा पूर्व पश्चिम कोने में कमशः गोलाकार तथा वर्गाकार दीपदान या अगरबत्ती दान हैं। ये सब प्रस्तर से बने हैं। लिंग के ऊपर चांदी का छत्र है। और एक त्रिशूल है। लोग इसी चौकोर योनि तथा लिंग की परिकमा तथा पूजा–अर्चना, धूप–दीप, घी–मक्खन, फूल आदि भेंट चढ़ाकर करते हैं।

जागरे के दौरान दो बलियां एक नर भेड़ की तथा दूसरा नर छाग–शिशु की, दिए जाते हैं। नर भेड़ को मंदिर के भीतर ले जाकर जयकारी देकर, पत्तरी देने के बाद यदि भेड़ की कंपकंपी हो जिसे देवता द्वारा स्वीकारोक्ति मान कर, बलि दी जाती है। मांस का प्रयोग खाने में किया जाता है। 'भाट' छाग–शिशु को देवी मां के नाम पूरे मंदिर तथा लोगों के चारों ओर थापिक्ची कर लोट नाले की ओर ले जाकर, बलि देते हैं। इन दोनों जीवों के जिगर के छोटे छोटे कच्चे टुकड़े टोटा के साथ मिलाकर सभी मांसाहारियों में बांटे जाते हैं। 'सरा' तथा चक्टी के शौकीनों को ये दोनों पेय पदार्थ परोसे जाते हैं। शेष लोगों को मीठी नमकीन चाय के अतिरिक्त ठंडे पेय पदार्थ भी दिए जाते हैं। भुने हए जौ के दाने कुर्र कुर्र, मार्चू, टाफियां, सेब के टुकड़े आदि सभी परोसे जाते हैं। अर्थात मेज़बान अपनी ओर से जो भी परोसना चाहें लगभग सभी जायज़ है। **चित्र पृष्ठ 8 पर**

प्यूकर गांव के देवता : स्रवाग व तंगजर

—उरज्ञान छेरिंग

लाहौल के भागा उपनदी की घाटी के निचले भाग का नाम पुनन अथवा गाहर है। इस घाटी में पूर्ण रूप से बौद्धों की जनसंख्या है। तौद घाटी खत्म होते ही पुनन घाटी का पहला गांव प्यूकर तिखाई देता है जहां स्रवाग व तंगजर सद (देवता) का निवास स्थान है। प्यूकर गांव का असली पुराना ग्राम–देवता स्रवाग है जो यहां तंगजर देवता की स्थापना से पहले ही निवास करता था। आज भी स्रवाग का महत्व उतना ही है जितना कि तंगजर के आने से पहले था। लेकिन तंगजर पर पुनन के अलावा पट्टन तथा तोद घाटी के लोग चाहे बौद्ध हों या हिन्दु धर्म के अनुयायी, सभी को अगाध श्रद्धा और विश्वास है।

हर तीन वर्षो में दो वर्ष देवता स्रवाग और तंगजर अपने देवालय से निकलते हैं। स्रवाग देवता अपने निवास स्थान के पास रहता है। व तंगजर गांव व लाहौल के अन्य गांवों की धार्मिक परिक्रमा पर निकलता हैं। तंगजर देवालय के खुलने के कुछ दिन वाद यदि पुनन, पट्टन व तोद घाटी से निमन्त्रण आए तो निकलते हैं, परन्तु कभी–कभी केलंग व बिलिंग गांव तक यह अपनी इच्छा से भी धार्मिक यात्रा पर साथ जाते हैं।

इतिहास – स्रवाग देवता

स्रवाग देवता कहां से आए तथा कब आए, इसके बारे में कुछ सुनने को नहीं मिलता है। पर इतना ज़रूर है कि साल के दौरान प्यूकर गांव में स्रवाग और तंगजर देवता से सम्बन्धित जो भी पूजा अर्चना की जाती है तब हमेशा पहले स्रवाग देवता का नाम लिया जाता है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि यह यहां पहले से था। स्रवाग का लबदाग (पुजारी) मैलगपा है। स्रवाग देवालय खोलने के बाद देवालय के पास ही रहता है। गांव में भी परिक्रमा के लिए नहीं उतरता है। ऐसा सुनने में आया है कि अभी तक एक या दो बार गांव में पधारे थे। ऐसा भी कहा जाता है कि स्रवाग या तो अच्छे के लिए या बुरे के लिए गांव में पधारते हैं। स्रवाग और तंगजर के बारे में कहावत है कि किसी ज़माने में इन दोनों में समझौता हुआ, जिसमें तंगजर ने स्रवाग से कहा– हर वक्त 'फूद' (प्रसाद) शुरु में आप ग्रहण करेंगे, उसके बाद मैं ग्रहण करूँगा। लेकिन उसके बदले में सबसे ऊपर (गोरो) मैं बैठूँगा। यह कहावत सही लगती है। जैसे कि पहले वर्णन किया गया है कि साल के दौरान दोनों देवताओं से सम्बन्धित जो भी पूजा अर्चना 'छोचीस' (शागुण) किया जाता है तो पहले स्रवाग का नाम लिया जाता है, उसके बाद तंगजर का।

तंगजर देवता

प्रचलित किंवदन्तियों के अनुसार तंगजर देवता तोद घाटी के सारंग गांव में प्रतिष्ठित थे। ऐसा कहा जाता है कि उस समय वहां यह देवता बारह वर्ष में एक नरबलि लिया करता था। एक बार उस गांव में एक बूढ़ी औरत के इकलौते बेटे की नरबलि देने की बारी आई। बूढ़ी औरत बहुत दुःखी थी। क्योंकि उसका अपने इकलौते बेटे के अतिरिक्त कोई सहारा न था। उसे दुःखी देखकर भगवान ने लामा का रूप धारण कर बूढ़ी औरत के पास जाकर रोने का कारण पूछा। बूढ़ी औरत ने सारी व्यथा कह सुनाई। लामा ने तंगजर के नरबलि लेने से मुक्ति दिलाने की बात कही, जिसके लिए लोगों द्वारा लामा को ऐसा करने की सहमति दे दी। उस लामा ने तंगजर के सामने अपने आप को प्रस्तुत कर कहा– "हे देवता आप इस बुढ़िया के इकलौते पुत्र के बदले में मेरी बलि लो। तुम मेरे हाथ, पैर एवं सिर काटकर बलि चढ़ा दो।" अन्त में यह सब नहीं होने पर लामा ने तंगजर देव–चिह्न को उस गांव के नीचे भागा नदी में विसर्जित कर दिया। यह मूर्ति नदी में बहती हुई पुनन क्षेत्र के सतिंगरी तथा प्यूकर गांव के मध्य भागा नदी में समेन–दोमेन नामक स्थान में बड़े–बड़े पत्थरों के मध्य में फंस गया और उसके आस–पास रात–दिन अजीब सी रहस्यमयी धुन्ध छा गई। जब सप्ताह भर ऐसा ही वातावरण बना रहा तो सतींगरी थवास के एक बुर्जुग ने वहां पर आकर उस धुन्ध के अन्दर जाकर देखा तो वहां पर एक देव मूर्ति को पत्थरों के मध्य में फंसा हुआ पाया। उस बुजुर्ग ने उस देव मूर्ति को सारंग गांव में नरबलि लेने वाले तंगजर देवता के रूप मे पहचाना और नरबलि लेने की घटना से पूर्व परिचित था।

तंगजर देव मूर्ति को नदी से बाहर निकालने से पूर्व उस वृद्ध ने तंगजर देवता से यह शर्त मन्जूर कराई कि यदि देवता आज के बाद नर–बलि आदि लेने के स्थान पर 'ब्र०स'(सत्तू के पिण्ड) तथा मारकेन्ची (मक्खन

के बने प्रतीकात्मक बकरे) की बलि लेने के लिए मन्जूर हों तो उन्हें आदर–सत्कार सहित सतींगरी गांव में प्रतिष्ठित किया जायगा। देवता ने उनकी यह शर्त स्वीकार की। तब उस देव–मूर्ति को नदी से बाहर निकाल कर सतींगरी गांव में प्रतिष्ठित किया गया। कई साल तक वहां पर उस देवता की पूजा–अर्चना करते रहे। आजकल आम तौर पर इस देवता के रक्त–पूजन के स्थान पर ब्र०ास और मारकेन्ची की बलि अर्पित की जाती है। कुछ विशेष अनुष्ठानों के अवसर पर ही भेडू–बकरे की बलि दी जाती है। सतींगरी गांव में तंगजर देवता का निवास स्थान लोगों के आम रास्ते के नीचे की तरफ था, जिस पर कुछ वर्षों के पश्चात् लोगों ने सोचा कि सारे लोग देवता के निवास स्थान के ऊपर से चलते हैं जिसके कारण देव–स्थान अपवित्र हो रहा है। इस पर गांव वालों ने एक दिन फैसला किया कि तंगजर देवता को प्यूकर गांव में पहुंचा देते हैं, जहां पर ग्राम देवता–स्रवाग गांव के ऊपर साफ सुथरे स्थान पर निवास करते हैं। वहां स्रवाग देवता के साथ तंगजर देवता के निवास के लिए उपयुक्त रहेगा। ऐसा कहा जाता है कि सतींगरी गांव वालों ने तंगजर को प्यूकर पहुंचाने से पहले प्यूकर गांव वालों से राय ली, तो उसके बाद ग्राम देवता स्रवाग से पूछ (देवता के गूर द्वारा उच्चरित 'देववाक') रखी, जिसके लिए स्रवाग देवता ने तंगजर देवता को वहां अपने पास प्रतिष्ठित करने के लिए स्वीकृति इस शर्त पर प्रदान की कि स्रवाग देवता का स्थान सदैव सर्वप्रथम रहेगा। देव प्रक्रिया में हर किसम का छोचीस (शागुन) करते समय सबसे पहले फुद (प्रसाद) भी वही ग्रहण करेगा और उसके बाद तंगजर देवता ग्रहण करेंगे। इस प्रकार तंगजर आज पुनन घाटी के शीर्ष देवता हैं।

एक अन्य जनश्रुति के अनुसार, जो उपरोक्त किंवदन्ती से थोड़ी भिन्न है, तंगजर अतीत में सारंग गांव में ही रहते थे और वे कोई नर–बलि नहीं लेते थे। उस गांव की एक विवाहित औरत की कोई सन्तान नहीं थी। उसने एक दिन तंगजर के पास जाकर सन्तान के लिए आशीर्वाद मांगा कि यदि उसके दो पुत्र का वरदान मिलेगा तो मैं प्रथम पुत्र को नर–बलि के रूप में समर्पित करूँगी। कुछ समय के पश्चात् उस औरत ने दो पुत्रों को जन्म दिया तो उस औरत ने अपने पुत्र मोह के कारण तंगजर देवता को दिए अपने वचन से मुकर गई। अपने वचन को पूरा नहीं कर पाने के असमंजस में वह बहुत चिन्तित रहने लगी। तब भगवान के रूप में एक लामा प्रकट होकर उसने औरत से चिन्ता का करण पूछा तो उस औरत ने अपनी सारी व्यथा लामा को सुनाई। तत्पश्चात् ही उपरोक्त सारी घटनाएं घटी जिसका वर्णन ऊपर आ चुका है। तंगजर देवता को ल–ग्यपो भी कहते हैं। 'ल' का अर्थ देवता है तथा ग्यपो का अर्थ राजा। इस प्रकार इसे सभी देवताओं का राजा माना जाता है जबकि घेपङ् देवता को सभी मानव का राजा मानते हैं। तंगजर, घेपङ तथा मलाणा गांव का जम्बलू देवता तीनों भाई हैं। इन तीनों देवताओं में तंगजर देवता सब से बड़ा भाई, घेपङ् राजा मंझला भाई तथा जम्बलू–देवता सब से छोटा भाई है। तंगजर देवता का 'लबदाग' (पुजारी) प्यूकर ग्ताग के बरच़ीपा घर वाले हैं।

वार्षिक कार्यक्रम

यह दोनों देवता प्रत्येक तीन साल में दो साल लगातार अक्तूबर/नवम्बर महीने में (देवालय) खोलते (मांगस अल्वा) हैं तथा तीसरा साल बन्द रखते (मांगस तीगचा) हैं। जिस साल घेपङ् सद् खोलने की बारी हो तो उस साल बारी न हो तो भी खोला जाता है। ये दोनों हमेशा एक साथ खोलते व एक साल बंद करते हैं। इन दोनों देवताओं का देवालय प्यूकर गांव में दो जगह हैं। एक देवालय का स्थान प्यूकर गांव से थोड़ा ऊपर एक टीले पर है जहां देवदार/धूपी के बहुत पुराने और बड़े.बड़े सूखे 7 पेड़ हैं। इन पेड़ों व आस–पास के स्थान का नाम 'सद्केर' बूटा है। इन पेड़ों में जो पेड़ सब से ऊपर की ओर है उनमें इन देवताओं के तीन लम्बे–लम्बे दार (शहतीर), जिनकी लम्बाई लगभग 15–20 फुट होगी और गोलाई–मोटाई लगभग आठ से दस इन्च होती है, खड़ा करके इन पेड़ों के साथ बाँध कर रखा होता हैं। देवता के इन शहतीरों को स्थानीय बोली में 'चारशींग' कहते हैं। इन तीन चारशींगों में से एक 'ल–ग्यापो तंगजर' का, तथा दूसरा स्रवाग देवता का है। तीसरा राजा घेपङ् द्वारा कभी उसके बड़े भाई तंगजर देवता को भेंट स्वरूप दिया जाता है ऐसा कहते हैं। ऐसा भी कहा जाता है कि वर्तमान वाला तंगजर देवता का चारशींग बहुत पहले एक विशेष प्रकार की विधिवत पूजा के बाद मोहन नाले के अन्दर वाले जंगल से लाया गया था जो देवदार/धूपी के पेड़ के तने का भीतरी भाग है। इसी सदकेर बूटा के पास एक बड़ा सा पत्थर है। पहले इसी पत्थर के नीचे तंगजर व स्रवाग देवता का 'खयूँग' एक सन्दूक के अन्दर ताले में बन्द करके रखा होता था, लेकिन वही आजकल पास में बने बड़े से लतों के साथ एक बहुत छोटा सा मन्दिर बनाकर उसमें रखते हैं। खयूँग सम्भवतः लोह–धातु से बनी साँप की शक्ल की बनी (मूर्ति) होती है जिन्हें दोनों देवताओं के 'लबदाग' (पुजारी) व गूर के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं देख

सकता और न ही हाथ लगा सकता है। जब देवताओं को खोलते हैं तो इन खयूँग के दोनों देवताओं के लबदाग और गूर, जौ के दाने के साथ मिला कर सफेद कपड़े में लपेट कर देवता के शहतीर के एक सिरे पर जिस तरफ लबदाग देवता को पकड़ते हैं। उस सिरे पर अच्छी तरह बाँध देते हैं। खयूँग को देवता के चारशींग में बाँधने के पश्चात् उस चारशींग में देवता की शक्ति आ जाती है या हम यूँ भी कह सकते हैं कि खयूँग बाँधना चारशींग में प्राण डालने के समान है। ऐसा कहा जाता है कि इन देवताओं को बन्द करते समय जब दोनों देवताओ से खयूँग अलग किया जाता है और वापिस अपनी जगह पर रखा जाता है तो उस समय जौ के दाने जो खयूँग के साथ मिला कर रखे होते हैं, उनमें पीली कौंपलें निकली होती हैं जिन्हें स्थानीय बोली में थवर कहते हैं जहाँ खयूँग रखा होता है उसी के साथ एक बड़ा सा लतो भी है जिसके ऊपर तीन पत्थर (छपला), पवित्र देवदार (शुर) की टहनियां व बहुत पुराने सींग आदि रखे होते हैं।

दूसरा देवालय जिसे हम भण्डार–कक्ष सद्उरची' कहते हैं गांव के बीच में है जहाँ छोटा सा ढाई मंजिला मकान बना हुआ है। इसी में दोनों देवताओं की छतरी, रंग–विरंगे कपड़ों की कतरनें, तथा देवताओं के अन्य साज़ो–सामान रखा होता है। जब भी किसी को तंगजर और स्रवाग देवता को चढ़ाना होता है तो इसी सद्उरची में चढ़ाया जाता है। इसी में वर्ष के दौरान देवताओं से सम्बन्धित बहुत से धार्मिक कार्यक्रम को अन्जाम दिया जाता है।

जब भी इन दोनों देवताओं को खोलना होता है तो अक्तूबर/नवम्बर महीने में 'यरछेस' (शुक्ल–पक्ष) के दौरान सोमवार या शुक्रवार के दिन को ही किया जाता है। इसी तरह धार्मिक परिक्रमा के 1–2 महीने के बाद इनको देवालय में बन्द करना हो तो फिर से यरछेस के दौरान सोमवार या शुक्रवार को ही किया जाता है।

देवताओं को खोलते वक्त कक्ष से दोनों देवताओं की छतरी, रंग–विरंगे सूत तथा रेशमी कपड़ों के कतरनों के गठरों व अन्य सामान को सद्केर–बूटा, जहाँ पर चारशींग, खयूँग तथा लतो होता है, में लाया जाता है। देवता के सामान की सदउरची से ले जाने से पहले तंगजर का लबदाग, सुबह उठने के बाद स्नान करके उस दिन तब तक कोई भोजन ग्रहण नहीं करते, जब तक दोनों देवता खोलने के बाद पूरा तैयार नहीं कर लेते। देवता खोलने वाले दिन लबदाग सुबह सद्उरची आते समय अपने घर से मारकैन्ची (मक्खन से बने बकरे) लाकर आते हैं और सामान को खोलने से पहले मारकेन्ची को सदउरची में छोचीस (शागुण) करते हैं जो उसी लबदाग द्वारा किया जाता है जो इस प्रकार होता हैः–

स्रवाग पल तंगजर खेन
थन हिंग मांगस अलछे,
हिंगगो नंग दे रो एपो ररे द.'

इस दोचीस (शागुण) के साथ–साथ देवते का बजन्तरी भी 'घोचूम राग' (शागुण का ताल) बजाता है। यहाँ पर छोचीस पूरा करने के पश्चात् सदउरची/भण्डारकक्ष से दोनों देवताओं के उपरोक्त वर्णित सामान को निकाल कर गांव के प्रत्येक घर से एक–एक 'कलछोर' (छाँग/शराब) आदि छोचीस शागुण में प्रयोग करने हेतु जिनके ऊपर मक्खन का छोटा सा टुकड़ा डाला होता है) के साथ प्रत्येक घर से एक मनुष्य इकट्ठे होकर सद्कोर बूटा की ओर प्रस्थान करते हैं। पुराने समय में तो कलछोर में केवल 'बोज़ा–छाँग' (चावल से बनी छाँग–ब्रछाँग) सींग--सींग (ज़दछाँग) ले जाते थे, लेकिन अब देसी शराब भी ले जाते हैं। सद्केर बूटा देवालय में चारशींग को नीचे उतारने से पहले पूरे गांव के प्रत्येक घर से लाए कलछोर को दो भागों में बाँट देते हैं। इस आधे कालछोर को जब सद्केर बूटा से चारशींग को उतरने से पहले छोचीस किया जाता है जिसे दोनों देवताओं के लबदाग व गूर, देवते का बजन्तरी छोचीस राग बजाते हुए इस प्रकार करते हैं :–

स्रवाग पल तंगजर खेन
थन हिंग मांगस अलछे,
चारषींग फफचे, हिंग नंग दे रो एपो ररे द।'

इसके बाद दोनों देवताओं के चारशींग को उतार कर खयूँग बाँधने वाले सिरे को ज़मीन में पत्थर से सटाकर रखा जाता है तथा चारशींग के दूसरे सिरे को जिस तरफ देवता का सिर बनाया जाता है उसे ज़मीन से चार–पाँच फुट की ऊँचाई पर दो ब्रचा (अंग्रेज़ी अक्षर वाए के आकार के लगभग पाँच से सात फुट लकड़ी के डण्डे) के सहारे एक दूसरे को क्रौस करके 60^0 से 70^0 तक खड़ा करके रखा जाता है। उसके बाद दोनों

देवताओं के पुजारी, गूर (मेम्बा), कारदार, हारुका, कारकूण, हारयान तथा अन्य लोगों की सहायता से चारशींग को रंग-विरंगे सूती व रेशमी कपड़ों की कतरनों से बाँध कर सजाने का काम शुरु होता है। ज़मीन से उठाकर रखे सिरे पर देवता का सिर बनाया जाता है तथा उसके शीर्ष पर सोने चान्दी के छत्र या छत्री चढ़ाई जाती है। अन्त में दोनों देवताओं के लबदाग, गूर, ,ख्यूँग (सम्भवतः लोहे के बने साँप के आकार) को जौ के दानों के साथ मिलाकर कपड़ों में बाँध कर अच्छी तरह से कस लेते हैं।

इसके बाद देवताओं को सजाने और प्रतिष्ठा का काम पूरा हो जाता है। गांव के आधे बचे कालछोर को देवताओं को उठाने से पहले फिर से छोचीस (शागुण) दोनों लबदाग व गूर इस प्रकार करते हैं:-

स्रवाग पल तंगजर खेन
थन हिंगजी इनीजो मांगस अलचूमचूकी
कालछोर छोछे, हिंग छाईं-छाईं रो एपो ररे द।

इस सारे कार्यक्रम में नगाड़ा, थाली (छिम-छिम), रणसिंगा आदि बजाने वाले हमेशा साथ रहते हैं। इस प्रकार स्रवाग व तंगजर देवता उठाने व परिक्रमा पर जाने के लिए तैयार होते हैं। लेकिन जब भी देवताओं का परिक्रमा पर जाने के लिए ज़मीन से उठाने से पहले तीन बार 'यूरा ओ' की ध्वनि पहले देवताओं के लबदा बोलते हैं। उसका जवाब देवता को सिर की ओर से उठाने वाले लोग भी इसी प्रकार तीन बार बोलते हैं, तत्पश्चात् इन देवताओं को उठाया जाता है। उसी दिन तैयार होने के बाद दोनों देवताओं को उठाकर सदकेर बूटा में ऊपर के 2-4 वृक्ष व लतो के तीन चक्कर लगाने के बाद सदकेर बूटा के समीप गुर-गुर नामक स्थान पर पूरे लाव-लश्कर के साथ लाया जाता है। वहां दोनों देवताओं को रखा जाता हैं तथा पूरे गांव वालों को फिर से कालछोर लाने के लिए कहा जाता है जिन्हें एक साथ देवताओं के आगे लाईन पंक्तियों में रख कर फिर से छोचीस दोनों लबदा, गूर व बजन्तरी के छोचीस राग (शागुण ताल) के साथ इस प्रकार करते हैं-

स्रवाग पल तंगजर खेन
इनीजो कालछोर नंग मार-मार जद छोछे,
हिंगजो टेम-टेम दो छर छू तगदो लुछू दो रो,
लो लक्शी, पण्डे वेरजी।

इन दो देवताओं को यहाँ गुर-गुर स्थान पर लाने के पीछे मकसद यह बताया जाता है कि बहुत पहले पुराने ज़माने में दोनों देवता को प्यासो गांव व तिनन (गोन्धला) त्रेसकीस के लिए प्यासो गांव का देवता 'डबला' भी इन दोनों देवताओं के साथ जाता था। ऐसा बताया जाता है कि जब ये तीनों देवता कोरा के रास्ते गोन्धला की तरफ जाते थे तो कोरा की चोटी वाले रास्ते में पहुंच कर डबला-देवता हमेशा आगे चलकर रास्ता बताता था, बाकी दो देवता पीछे-पीछे चलते थे। गोन्धला घाटी के सभी आठ देवी-देवताओं का हर तीसरे साल एक बार मिलन खयूँग के नजदीक गुन्चलिंग (इस गुन्चलिंग मैदान में देव-मिलन को क्यसुमदोर मेला कहा जाता है) नामक स्थान पर होता था जो आज भी प्रचलित (यथावत) है। इसी देव-मिलन के लिए हर तीसरे वर्ष शरीक होने के लिए यह तीनों पुनन घाटी के देवता जाते थे जो आजकल प्रचलित नहीं है। यह प्रथा कब, क्यों और कैसे बन्द हुआ? यह एक खोज का विषय हैं। आज स्रवाग और तंगजर देवता को गांव से ऊपर ले जाने का मतलब यही लगता है कि उनको गुन्चलिंग मैदान में क्यसुमदोर देव-मिलन के लिए ले जाना है।

गुर-गुर नामक स्थान पर उक्त धार्मिक कार्यक्रम के बाद स्रवाग देवता को वहीं पर विराजमान किया जाता है जब कि तंगजर देवता कई बार उसी दिन और या कईबार कुछ दिन स्रवाग देवता के साथ वहीं रहने के बाद गांव की धार्मिक परिक्रमा पर निकलते हैं। काफी साल पहले तक तंगजर देवता अपने आप गांव के हर घर में पधार कर अपने सिर के साथ जिस घर में जाते, उस घर के मुख्य द्वार या सामने वाली दीवार को छूकर (जिसे थुकचा कहते हैं) आशीर्वाद देते थे। उसके बाद उस घर के प्राँगण में थोबी (गलीचा) बिछा कर पूरे परिवार के साथ तंगजर देवता को विराजमान कर कलछोर छोचीस किया जाता है और उसके बाद लोगों को उस घर के अन्दर ले जाकर फिर से छोचीस किया जाता है तथा मक्खन के साथ सभी लोगों को 'छुचीस' (मक्खन का छोटा टीका सिर में लगाना) किया जाता है और खूब आदर सत्कार व मेहमानबाजी की जाती है। परन्तु आजकल तंगजर देवता खुद के पधारने से पहले ही गांव के लोग आपस में सलाह कर किस दिन किस

के घर ले जाना है, तय कर लेते हैं तथा तंगजर देवता को पूरे सम्मान के साथ निमन्त्रण दे कर बुलाया जाता है। आजकल जिस घर में भी पधारते हैं, वहाँ पर थुकचीस (सिर से घर को छूना) वाली प्रथा लगभग समाप्त है या यूँ कहें कि जहाँ जिस घर में निमन्त्रण के बाद पधारते हैं वहां पहले से देवता तथा कारकून के लिए सभी तैयारियँ कर रखी होती हैं। देवता के पधारने पर प्राँगण में बिछाई थोबी/गलीचे के ऊपर सीधा आदरपूर्वक विराजमान किया जाता है। बाकी रस्में वही निभाई जाती हैं जिन्हें पहले वर्णन किया गया हैं।

जनश्रुति है कि बहुत समय पहले तंगजर देवता पुनन के बाहर पट्टन में उदयपुर तक, गोन्धला घाटी में खोकसर तक तथा तोद् घाटी में जिस्पा तक धार्मिक परिक्रमा पर निकलता था। बीच में किन्ही विशेष कारणों से यह प्रथा बन्द हो गई थी और यह धार्मिक परिक्रमा पुनन तक सीमित होकर रह गई थी। लेकिन पिछले कुछ सालों से पुनन घाटी से बाहर के लोग भी पट्टन व तोद घाटी के लोग आदरपूर्वक तंगजर देवता को आमन्त्रण भेजने के कारण इन जगहों पर निकलने लगे हैं। वैसे बीलिंग गांव तक कभी–कभी अपनी खुशी से निकलते थे। लेकिन आजकल आदरपूर्वक आमन्त्रण आने पर ही जाते हैं। तंगजर देवता का पुनन घाटी के कई गांवों के घरों में उनको अपना घर मानते हैं जिसे लखाँग कहते हैं। जब भी देवता धार्मिक परिक्रमा पर गांव से बाहर निकलते हैं तो इन घरों में अवश्य जाते हैं। जहाँ–जहाँ देवता का अपना लखाँग है उन घरों के पास देवता की ज़मीन भी होती है जिसे इन्हे दी होती है। यह लखंग पुनन में इस प्रकार से है:– सितिंगरी, क्योर, यूरनद, गुमलिंग, गुस्क्यार, अप्पर केलंग, लोअर केलंग और बीलिंग गांवों में थवास; थैजी व योरोक्यी; थवास; थोलगपा; थालक्स; कारपा (दोनों कारपा व राला कारपा); योरोगपा, दूसकूपा व थास; तथा गुस्क्यरपा (दोनों गुस्क्यरपा) के घर क्रमश।

जब तंगजर प्यूकर से बाहर निकलते हैं तो मैलगपा घर वाले जो स्रवाग देवता का लबदाग होता है इनके घर को छोड़ कर बाकी इस गांव के प्रत्येक घर से एक–एक आदमी, गूर, कारदार, बजन्तरी सब को तंगजर देवता के साथ हारूका/हारयान के रूप में यात्रा पर जाना पड़ता है। इस दौरान तंगजर के प्यूकर गांव वापिस लौटने तक मैलगपा को स्रवाग देवता के लिए प्रतिदिन सुबह संगशू (धूनी) पवित्र देवदार (शुर) की टहनियों को जलाकर सुगन्धित धुँआं स्रवाग देवता के पास निकालना होता है।

स्रवाग और तंगजर को एक साथ बन्द किया जाता है। दोनों देवताओं को खोलने के एक से दो महीने बाद 'यरछेस' (शुक्ल पक्ष) के सोमवार या शुक्रवार को देवालयों में बन्द किया जाता है। देवताओं के बन्द होने के बाद भी पूरे वर्ष के दौरान गांव के प्रत्येक घर से हर महीने मारकैंची जिसे 'फोची' भी कहते हैं तथा ब्रंझस (सत्तू की बलि) आदि बनाकर देवताओं को अर्पित की जाती हैं। मारकैंची गांव के प्रत्येक घर से हर महीने इस प्रकार से दिए जाते हैं। वरचीपा एक फोची (मक्खन का बकरा) केवल तंगजर के लिए लाता है। मैलगपा, दोरजे तंगरिपा, छारपा, छरज़ीपा पाँगला और तेंगरिपा (दावा) तीन तीन फोची स्रवाग, तंगजर और घेपङ् राजा के लिए लाते हैं। बाकी बचे सारे घर वाले केवल दो–दो फोची एक स्रवाग तथा एक तंगजर देवता के लिए चढ़ाते हैं। जब ये मारकैन्ची हर महीने दिया जाता है तो लोग अपने घर के छतों में लतो में पवित्र देवदार (शुर) वृक्ष की छोटी टहनियों को चढ़ाया जाता है,। साथ ही शांगशू निकाला जाता है। फिर फोची को लतो के सामने रखकर फोची को तीन बार छोचीस किया जाता है। मारकैन्ची देने वाला या तो देवताओं के पुजारी या उस घर का कोई मर्द होता है। यदि किसी के घर में मर्द उपलब्ध न हो तो किसी और घर के मर्द या पुजारी द्वारा दिया जाता है। मारकैन्ची देने वाला उस दिन सुबह उठ कर कोई खाना ग्रहण नहीं करता। हाथ–मुंह धोकर जिस घर में मारकैन्ची देना होता है वहां से एक थाली/परात में मक्खन ले जाकर गांव के पानी के चश्मे जिसे 'मूर्ति' कहते हैं वहां जाकर बकरा/नरभेडू के प्रतीकात्मक रूप में मक्खन का बनाता है। पाँव में जूतों के स्थान पर स्थानीय घरेलू बुनकरों द्वारा बनाई गई 'पुलें' पहननी होती हैं, साथ में सिर में टोपी पहन कर अपने शरीर के ऊपर एक चादर (बुरस) ओढ़ना आवश्यक होता है। चश्मा वाली पानी से मारकैन्ची देने के लिए फोची बनाकर घर के छत में बने लतो के पास जाकर छोचीस करता है जहां पर सांगसू (धूनी) रखा होता है। उसके साथ पहले कोर सोंग–सोंग करता है फिर छोचीस इस प्रकार करता है।–

स्रवाग पल तंगजर खेन
इनीजो मारकैन्ची दचे
डतो फितो हिंग तेन्चीपा हेन,
हिंग जो एपो ररे द, छोद।

इसे तीन बार किया जाता है और हर फोची के साथ किया जाता है और प्रत्येक बार मारकैन्ची देने वाला अपने दोनों हाथ से फोची के सींग व धड़ से छोटे–छोटे मक्खन के टुकड़े निकाल कर छोद बोलते समय उन्हें आसमान की ओर अर्पित करते हुए फैंकता है। जब घेपङ् महाराज के लिए फोची छोचीस करता है तो उसके लिए नर भेडू का फोची बना होता है। उस समय घेपङ राजा का नाम लिया जाता है। बाकी उसी तरह से बोला जाता है।

इस साल 2008 में स्रवाग और तंगजर देवता को 17 अक्तूबर (शुक्ल–पक्ष) को खोला गया और उसी दिन सिसू में अपने देवालय से राजा घेपङ को खोला गया और साथ ही चन्द्रा–घाटी के सभी सात देवताओं को भी खोला गया है। 29 अक्तूबर 2008 को तंगजर देवता हाल ही के वर्षों में पहली बार चन्द्रा घाटी में गोन्धला गांव के ठीक सामने वाले गांव में किसी के घर से बार–बार निमन्त्रण आने के बाद पधारे हैं। वहाँ से वापिस आकर आजकल पट्टन–घाटी के कई गांव से आए निमन्त्रण के बाद इस घाटी के दौरे पर हैं। ऐसा सुनने में आया है कि 'ल–ग्यापो' तंगजर को त्रिलोकनाथ तक कई गांव एवं घरों से निमन्त्रण आया है। उन सब के पास जाकर ल–ग्यापो तंगजर को शायद नवम्बर 15–20 तारीख तक समय व्यतीत होगा।

पेज नं. 27 से आगे ....

एक दिन बूढ़ा अपने नौकर को राजा के दरवार में आमंत्रण के लिए भेजता है। राजा दिल ही दिल में सोचता है कि फकीर हमें क्या खिलाएगा। एक तो दोनों ही बहुत गरीब हैं। राजा अपने पूरा राज दरवार के साथ उसके घर में आता है। जैसे ही राजा उस घर में प्रवेश करता है तो आश्चर्य चकित रह जाता है। चारों तरफ सोना ही सोना होता है। खाने पीने का खूब आयोजन था। तरह तरह के पकवान होते हैं। दोनों आभूषणों से लदे थे। यानि तरह तरह के आभूषण पहने हुए थे। राजमहल से भी कई गुणा अच्छा घर था।

राजा एवं उनके पहरेदारों ने खूब खाना खाया और राजा ने अगले दिन दोनों बूढ़ा बूढिया को अपने राजमहल में बुलाया और अमीर बनने का रहस्य जाना। दोनों बुजुर्ग अपनी अमीरी का रहस्य बताते हैं। राजा ने कहा कि कृपया वो सामान हमें दे दो। सारा सामान दोनों राजा को दे देते हैं। फिर से दोनों गरीब बन जाते हैं। कुछ दिन बीत जाने के बाद बूढ़ा राजा के पास सामान मांगने के लिए जाता है। राजा सामान देने से इंकार करता है। चाहे कुछ भी हो, मैं सामान वापिस नहीं दूंगा। क्यों कि मेरे पास बहुत फौज है। राजा उस बूढे को कहता है कि कल लड़ाई होगी। जो लड़ाई में जीत जाएगा सामान उसको मिलेगा। राजा अपनी पूरी फौज को सजाकर रखता है। बूढ़ा मन ही मन में सोचता है कि क्यों न इसको *दम थगपा दुंग वेरका* का नाटक दिखाया जाए।

अगले दिन बूढा उस रस्सी व डंडे को लेकर जंग के मैदान में पहुंचता है। राजा बूढे से कहता है कि आपकी फौज कहां है। बूढा कहने लगा मुझे फौज की जरूरत नहीं। मैं स्वयं फौज हूं। दोनों तरफ से लड़ाई छिड़ जाती है। बूढ़ा बीच में पहुंचकर अपनी रस्सी और लकड़ी को निकालता है और मुंह से कहने लगा *दम थगपा दुंग वेरका।* रस्सी ने पूरी फौज को बांध दिया और *दुंग वेरका* कहकर सारी फौज को लकड़ी से मारता है। अंतिम क्षण में राजा हार जाता है। राजा हार जाने के बाद सारा सामान दोनों बुजुर्गों को लौटा देता है। पुनः दोनों अमीर बन जाते है। दोनों एक अच्छी सी जिन्दगी जी लेते है।

नोट :– इस कहानी में रोटी शब्द का जिक नहीं किया है।

होनहार सपूत – अरूण पंडित

– तोबदन

अरूण पंडित पंजाब टै0 यु0 में कम्पयूटर विषयक बी0टैक की डिग्री के अन्तिम वर्ष के विद्यार्थी हैं। पं0 भागसिंह के पुत्र अरूण पंडित, गांव चैम्बक लाहुल से सम्बन्धित है। अपने मुख्य विषय कम्पयूटर के अतिरिक्त उनकी रूचि बहुत विविध है, जैसे डिबैट, खेल क्विज़, लेखन आदि। उनकी रूचि के विषयों की गिनती और उपलब्धियों की सूची बहुत लम्बी है। उन्होंने हिमाचल प्रदेश के पूर्व मुख्यमन्त्री श्री वीरभद्र सिंह का साक्षात्कार भी लिया है। कम्पयूटर विषय में उनकी उपलब्धि विशेष रूप से उल्लेखनीय और प्रशंसनीय है। Microsoft से Microsoft Certificate Professional की परीक्षा सन् 2008 में 94 प्रतिशत अंक प्राप्त कर उत्तीर्ण हुए और बिलगेट, जो Microsoft Corporation के चेयरमैन हैं और विश्व के उच्चतम अमीर व्यक्तियो में से एक हैं, के हस्ताक्षर से Microsoft Certificate of Excellence प्रमाणपत्र प्राप्त किया है। कुन्ज़ोम परिवार उन्हें उनके इस आसाधरण उपलब्धि के लिए हार्दिक बघाई देता है और कामना करता है कि इसी गति से उत्तरोतर उंचाईयां प्राप्त करते जाएं।

हम अरूण पंडित का अपना व उनके सर्टीफिकेट की प्रति छाप रहे हैं।

Microsoft

ARUN PANDIT

Has successfully completed the requirements to be recognized as a Microsoft Certified Professional

Bill Gates

लद्दाख – मनाली का रास्ता

13 मार्च, 1950 :– लद्दाख की तरक्की के लिए ग्यारह लाख रूपये खर्च किए जाएंगे। जम्मू और कश्मीर सरकार की सलाह से लद्दाख की तरक्की के लिए तीन साला स्कीम तैयार की है। इसके तहत आवपाशी की स्कीम सहुलियतें पहुंचाने, जंगलात की पैदावार से फायदा उठाने, घरेलू सन्नतों की तरक्की, ज़रायत, आवाम की सेहत का स्तर बुलंद करने की तवजुवा दी जाएगी। इस प्रोग्राम पर कुल 11 लाख रूपये का अंदाजा लगाया गया है। गन्धक और बोरेक्स की तादाद में मौजूद है। कहीं कहीं सोना, वाक्सईड और कार्बन की भी खान पाए जाते हैं। अहम दवाईयों की तैयारी में काम आने वाली जड़ी बूटियां सारे जिला में काफी मौजूद हैं। रूबशो और नतान की झीलों से नमक को साफ करने के इंतजाम की जाएगी। कारगिल और लेह के बीच का गाड़ी आने जाने के लिए सड़क बनाई जाएगी। लद्दाख और कुल्लू के व्यापारिक सहुलियत के पेशे के नजर से मनाली के रास्तों को बेहतर बनाया जाएगा ताकि इस रास्ते पर टट्टुओं और खच्चरों की सहुलियत हो।

खबर, एक उर्दू अखबार से।

–संकलन, तोबदन

खरगोश और भेड़िया की कहानी

—नावांग नोरबू कुकुजी

किसी समय बकरी पालने वाले के झुण्ड से तीन बकरी के बच्चे बिछुड़ गए। किसी तरह वे इधर उधर घूम कर घास चर चर कर अपना पेट पालते थे। एक दिन एक भेड़िया वहां पहुंच गया। बकरी के बच्चे बहुत डर गए। एक दूसरे को देखने लगे। भेड़िया गुर्राया और बोला, तुम लोग यहां पर कहां से आये हो। यह क्षेत्र मेरा है और तुम लोग मेरा भोजन हो। तो बताओ तुम में से बड़ा कौन है।

बच्चे चुप रहे और डर के मारे थर्र थर्र कांपने लगे। भेड़िये ने सबसे बड़े बकरी के बच्चे को दबोचा और देखते ही देखते सारा मांस खा गया। अंत में डकार मारते हुए कहा देखो आज तो मेरा पेट भर गया अगले महीने इसी दिन मैं पुनः यहां पर आऊंगा। तुम मोटे ताजे बनकर रहोगे। कहकर वहां से चला गया। बेचारे बकरी के बच्चे बहुत चिंतित थे। भेड़िया आकर उन्हें खा जाएगा। ठीक अगले महीने भेड़िया बकरी के बच्चों को ढूंढते हुए फिर पहुंच गया। भेड़िये को देखकर बकरी के बच्चों के होश उड़ गये। भेड़िये ने गुर्राते हुए फिर बोला तुम दोनों में से कौन मोटे हो। आज मुझे जोर की भूख लगी है। जो मोटा जैसा था उसको पकड़ा और पूरा खा गया। अगले महीने की तारीख देकर चला गया।

बेचारा एक ही बच्चा बिना साथी के इधर उधर भटक रहा था और बहुत चिंतित था। इसी बीच में उसको एक खरगोश टकरा और बकरी का हालचाल पूछा। बकरी के बच्चे ने अपनी सारी कहानी सुनाई और कहा अगले महीने मेरी मौत है। भेड़िया आने वाला है। खरगोश ने सारी कहानी सुनी और गंभीर हो कहा देखो हम दोनों यहां एकांत में मिले हैं। हम दोनों एक दूसरे के साथ पति पत्नी के रूप में रहेंगे। मैं जो कहूंगा तुमको वही करना होगा। बकरी का बच्चा सहमत हो गया और दोनों इधर उधर घूमते रहे।

एक दिन कहीं से एक कागज का टुकड़ा मिला। खरगोश बोला इस कागज को उठाओ और ले चलो। बकरी के बच्चे ने कहा आप बहुत लालची हो यह हमारे किस काम का है। ले चलो काम आएगा। एक दिन फिर उनको टूटा फूटा एक कलम मिला। फिर खरगोश ने कहा इस कलम को भी उठाओ। बकरी के बच्चे ने कहा हम अनपढ़ों को यह किस काम का है। खरगोश ने डांटते हुए कहा बहस मत करो काम आएगा ले चलो। इस प्रकार एक दिन भेड़िया फिर उस बकरी के बच्चे को ढूंढते हुए वहां पहुंच गया। बकरी का बच्चा चीख पड़ा। खरगोश ने कहा डरो मत सब ठीक हो जाएगा। भेड़िया बकरी के बच्चे के नजदीक आने लगा तो खरगोश ने कहा ठहरिए आप कुछ देर। बकरी के बच्चे को कहा वह चिट्ठी लाईए जो सरकार से आई थी। बकरी के बच्चे ने तुरंत वह कागज़ का टुकड़ा लाया जो उनको रास्ते में मिला था। मेरा कलम भी लाओ। तुरंत वह टूटा हुआ कलम लाकर दिया। खरगोश ने कलम अपने कान के उपर धंसाया और कागज हाथ में पकड़कर भेड़िये से बोला भाई ऐसा है कि यह पत्र मुझे सरकार से विशेष आदमी द्वारा भेजा गया है। इसमें लिखा है कि इस वर्ष सरकार को नौ भेड़िये के खाल की आवश्यकता है। मैं कई दिनों से भेडिये ढूंढ रहा हूं नहीं मिला। अच्छा हुआ आज आप स्वयं यहां पर आ गए। ऐसा सुनते ही भेडिये ने छलांग लगाई और भागने लगा। खरगोश पीछे मुड़कर देखने लगा। ठहर अभी मेरे जूते का तस्मा खुल गया है। तेरे को अब पकड़ता हूं। भेड़िया और तेज भागा और इसके बाद भेड़िया कभी उस क्षेत्र में नहीं आया। इस प्रकार खरगोश ने बकरी के बच्चे की जान बचाई।

नोट – यह कहानी ''कुन्ज़ोम'' के प्रथम अंक, पृष्ठ 17 – 18 पर छपे, नावांग नोरबू कुकुजी के लेख का अनुवाद है।

कुल्लू में फोटोग्राफी का इतिहास

–तोबदन

प्रस्तुत लेख का विषय, जैसे कि इसके शीर्षक से ज्ञात होता है, कुल्लू में फोटोग्राफी के व्यवसाय का आगमन तथा उसके प्रारंभिक काल की कुछ जानकारी देना है। परंतु व्यापक रूप में इसमें अन्य विषयों से संबंधित कुछ आवश्यक व महत्वपूर्ण बिंदु भी प्रसंगवश उभर कर सामने आते हैं, यथा भारतीय इतिहास, चित्रकारी, फोटोग्राफी आदि। मूल रूप में यह एक कला व्यवसायी परिवार की तीन पीढ़ियों की कथा है। इस परिवार ने दो स्थानों से विस्थापित होकर तीसरे स्थान पर अपना ठिकाना बनाया। इसके साथ यह भी महत्वपूर्ण है कि इस घटनाक्रम का काल सन 1947 में भारत विभाजन तथा इनके पूर्व व पश्चात का समय है। घटना स्थल विभाजन के पूर्व का पश्चिमोत्तर भारत व उसके बाद दो फांक हुए भारत और पाकिस्तान हैं।

कुल्लू के अखाड़ा बाजार में सूद पैट्रोल पम्प के निकट स्थित फोटोग्राफी की दुकान 'रॉक्सी स्टूडियो' के मालिक दो भाई विजय कम्बोज और राजेन्द्र कम्बोज हैं। उन्होंने यह दुकान यहां 1959 में शुरू की थी। इसका उदघाटन पंजाब प्रांत के मुख्यमंत्री सरदार प्रताप सिंह कैरों ने किया था। तब कुल्लू पंजाब में था। उस समय यह कुल्लू में फोटोग्राफी की प्रसिद्ध दुकान थी। लाहुल स्पीति से लेकर पूरे कुल्लू से इनके पास काम आता था। ये छपाई के लिए नक्शों के ब्लाक भी बनाते थे।

भारत में फोटोग्राफी के व्यवसाय के आगमन से पहले कम्बोज परिवार चित्रकारी का पेशा करता था। इनके दादा गिरधारी लाल कम्बोज का जन्म पेशावर के पास सूबा सरहद में हुआ। वहां हालात खराब होने के बाद, क्योंकि अफगानीस्तान से आक्रमणकारी बन्नु–कोहाट व लाहौर तक आते थे, वे लाहौर आ गए। कुछ प्राकृतिक कारण भी थे। लाला गिरधारी लाल कम्बोज कुशल कलाकार–चित्रकार थे। वे राजाओं और नवाबों के पोरट्रेट (व्यक्ति–चित्र) बनाते थे। वे काश्मीर, पूंछ, राजौरी, जम्मू जैसे राज्यों में जाकर वहां चित्रकारी करते थे और साल–साल, दो–दो साल तक वापिस घर नहीं आते थे। मजदूरी के अलावा उन्हें पुरस्कार भी मिलते थे। उन्हें तमगे और शील्ड भी मिले थे। वे तमगे लगाकर भी रखते थे। लाहौर से जब उनका परिवार भारत आ रहा था तो उस समय उनके पास लगभग दस सेर ऐसी इनाम की वस्तुएं थीं। सरदार सोभा सिंह, जो प्रसिद्ध चित्रकार थे, बृजलाल तथा अन्य कई चित्रकार उनके शिष्य रहे हैं। वे म्युज़िकल साज़ भी बनाते थे। पिआनो और म्यूज़िकल वाच बनाने में हुनरमंद थे। उनके चार लड़के व लड़कियां थीं। सभी कलाकार–चित्रकार थे। सन 1890 के करीब उन्होंने लाहौर में, अनारकली बाज़ार में, जहां उनका घर था, 'गिरधारी लाल एण्ड सन्स फोटोग्राफर्स' के नाम से फोटोग्राफी की दुकान खोली। इधर फोटोग्राफी का पेशा सन 1888 में प्रथम बार आया था। अनारकली बाज़ार मुख्यतः हिन्दुओं का बाज'र था। यहां मस्जिद भी था। राजेन्द्र बताते हैं कि उनके यहां एक मैहर आता था जो दूध और राशन लाकर देता था। वह भी कम्बोज था और इसलिए दोनों में अच्छे संबंध थे। परंतु था वह मुसलमान। उसने अमूनिशन भी लाकर दिया था। विजय कहते हैं अनारकली बाजार लाहौर का दिल है और जिसने लाहौर नहीं देखा उसका जन्म असफल है।

गोपालदास, इनके पिता, पंजाब भर में प्रसिद्ध कुश्ती का खिलाड़ी, तैराक और फोटोग्राफर था। सन 1942 में वह आरएसएस से जुड़ गए और इस संस्था के सक्रिय नेता रहे। सन 1947 में वह लाहौर से फ्रंटियर मेल के जरिए लगभग 1000 शरणार्थी लेकर आए और उनका आवश्यक प्रबंध भी किया। जालंधर में वह आरएसएस की ओर से पाकिस्तान से आने वाले शरणार्थियों के लिए रहने, भोजन तथा स्कूल आदि का प्रबंध करने वालों के प्रमुख थे। सन 1949 में बिजली का करंट लगने से उनकी मृत्यु हो गई।

विजय कम्बोज का जन्म लाहौर में सन 1932 में हुआ। लाहौर में उनके पास पेंटिंग के बहुत से ब्लाक से कमरे भरे थे। इनका भार कम से कम आठ दस क्विंटल था। वे मोटे और भारी थे। रामायण और महाभारत के चित्र विदेशों को भेजते थे। इसके लिए तांबे के ब्लाक जर्मनी से बनवा कर लाए थे। वहां लाहौर में स्कूल के निकट बड़ा ग्राउंड था जहां बड़े बड़े नेता आकर भाषण देते थे और वे सुनते रहते थे। उन्होंने मास्टर तारा सिंह को यूनियन जैक को काटते हुए देखा है।

बारह अगस्त 1947 को कम्बोज परिवार लाहौर से भारत की ओर चल पड़ा। विजय ने पैरों में फलीट पहना हुआ था और पीठ पर ढाई वर्ष की छोटी बहन को उठाया हुआ था। लाहौर से वे अमृतसर आए। वहां से विजय जालंधर गया। फिर वे कइ जगह घूमे। उत्तर प्रदेश में गढ़वाल , कुमाऊं आदि स्थानों में रहे। यूपी के

गर्वनर के एम मुन्शी के फोटोग्राफर रहे। नैनीताल में बख्शी स्टुडियो में काम करता था। वहां महादेवी वर्मा से मुलाकात हुई। नैनीताल और हल्दवानी के बीच ताकुला नाम का उनका आश्रम था। बम्बई में आरके स्टुडियो में पृथ्वीराज के साथ काम किया। चंडीगढ़ में भी काम किया।

सन 1953 में उन्होंने होशियारपुर में राक्सी स्टुडियो नाम से दुकान खोली। उस समय लाला कुलजस राय कुल्लू में जड़ी बूटियों के प्रसिद्ध व्यापारी थे। उनके बेटे विजय के सहपाठी थे। उन्होंने बताया कि कुल्लू में फोटोग्राफी की दुकान नहीं है और यहां ऐसी दुकान की आवश्यकता है। तब उन्होंने यहां राक्सी स्टुडियो नाम से दुकान सन 1958 में खोली। उन्होंने सन 2005 के करीब कुल्लू न्यूज नाम से टीवी चैनल आरंभ किया था परंतु वह जल्दी ही बंद हो गया। सन 1960 में मनाली में उन्होंने दुकान खोली तथा भुंतर में भी। उन्होंने शराब और तम्बाकू नहीं पिया है। सन 1966 में मास्टर अमर चंद ने कुल्लू में मिनरवा स्टुडियो नाम से फोटोग्राफी की दुकान खोली।

राजकुमार का जन्म सन 1938 में अमृतसर में हुआ। यद्यपि उस समय वे और उनका परिवार लाहौर में रहता था, उनका जन्म अमृतसर में हुआ। उनके दादके लाहौर में था परंतु उनके रिवाज़ के मुताबिक बड़ा बच्चा ससुराल में तथा बाकी बच्चे मायके में पैदा होते हैं। वे छोटे हैं, भाईयों में। राजकुमार बताते हैं कि डॉक्टर भगवान सिंह, जो उस समय कुल्लू में काफी प्रसिद्ध व्यक्ति थे, का घर उनके साथ ही है। वे होशियारपुर से सूद हैं। उन्होंने लाहुल से एक नर्स से विवाह किया। उनके यहां महत्वपूर्ण व्यक्तियों से काम आता था और उनसे जान पहचान हुई। ठाकुर निहाल चंद से काफी नजदीकी थी। उनका मानना है कि सूद लाहौर में नहीं होते थे। वे कुल्लू में होशियारपुर से एक ही मुहल्ले से आए हैं। राय बहादुर जोधामल सूद वंश से प्रसिद्ध व्यक्ति हुए हैं। वे गरली प्रागपुर, कांगड़ा से हैं। सूद समुदाय का उद्‌भव स्थल भी वहीं है। वे जंगलात का ठेका लेते थे। काश्मीर, शिमला, होशियारपुर, आसाम आदि तक यह काम उन्हीं के पास था। मेहता बन्नू हाट से हैं बाद में उनमें से कुछ महाट्टा बन गए।

सबसे पहले कुल्लू में फोटोग्राफी का काम कूके करते थे। वे मंडी से थे। उनकी यहां दुकानें थी। बाद में उन्होंने यह काम छोड़ दिया। वे नामदेव के अनुयायी हैं। सफेद पगड़ी और नीला कमरबंद रखते हैं। सन 1960 में उन्होंने कुल्लू में चित्रों के ब्लाक बनाना शुरू किया। लाल चंद प्रार्थी व चुनाव के अन्य उम्मीदवारों के चुनाव चिन्हों के ब्लाक वे ही बनाते थे। उस समय रोलीकार्ड, रोली फैक्स व याशिका – 635 के कैमरा का प्रयोग करते थे। 120 एमएम और 35 एमएम (2 1/4 X 2 1/4 इंच) के बारह एक्सपोजर वाले रोल होते थे। इसका प्रिंट होता था परंतु एनलार्ज नहीं हो सकता था। प्रिंट का फलैट सिस्टम था। मेलों में प्रयोग होने वाला कैमरे में ब्लैक एंड व्हाईट फोटो ही निकाल सकते थे और यह मिन्टो फोटोग्राफी के नाम से जाना जाता है। आगफा बाक्स पचीस रूपये में बिकता था। 120 एमएम का रोल डेढ रूपये में बिकता था। बारह फोटो रूपये 3. 50 में प्रिंट करके देते थे। आजकल केनन, पैंटेक्स और मिनोल्टा के कैमरों का प्रयोग करते हैं और कोडक के प्रोडक्ट बेचते हैं। यह दुकान आजकल साधारण दिखाई देती है परन्तु भीतर लंबी कहानी छुपाए हुए है।

Himalayan Outdoor ADVENTURE Association "Search for higher heights ..."

HIMALAYAN CHALLENGE; 2009

Himalayan Outdoor Adventure Association (HOAA) aims to increase the opportunities for young people to take part in exploration, discovery and challenging adventure, and to make these programmes safer and more meaningful. A range of Himalayan Challenge (HC) camps lasting from 5 days, 7 days to 14 days are offered from April to November 2009 for young people aged between 12 to 14 and 15 to 18 years.

Instructions cover camp craft, first aid and survival skills, navigation, rock climbing, environmental topics, health and fitness, leadershjip studies, and practical involvement in group management in the outdoors. A wide variety of practical conservation work is also covered – such as trail maintenance, tree plantation and 'keep the Himalaya clean' projects and some other aspects of the camp. The challenges of working in remote Himalayan region, you will have the opportunity to learn from the traditional knowledge of local prople, and that in itself will be rewarding experience. Our area of operation covers Lahoul, Spiti, Kinnaur, Zanskhar, Leh-Ladakh and garhwal in Uttrakhand.

Special attractions : Mountain climbing edpeditions, River Rafting, Paragliding, Tribal/Buddhist culture tours, exploratory tracks, Adventure for physically handicapped, Snow Skiing, Visit to great Himalayan National Park, Pin Valley, Kibber Wild Life Sanctuary, etc. Groups and school parties are welcome. No previous experience or training is necessary, though one should be fit and healthy.

The instructors and staff are highly motivated and experienced. HC camps are very different from most ohther alternatives available in th and around Manali.

Costs start from Rs. 400/- per day, include instruction, accommodation and catering for a minimum period of a week.

Col. Prem Chand of Khangchendzongpa.

Promotion of Holistic Adventure-conservation of the Himalaya with Compassion, P.O. Box 26, Kullu-175101, 01902-226720, Mobile 09418388240, Fax-252581, Email: limdugpa77@gmail.com